जून २००५

मासिक परोपकारी

महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र
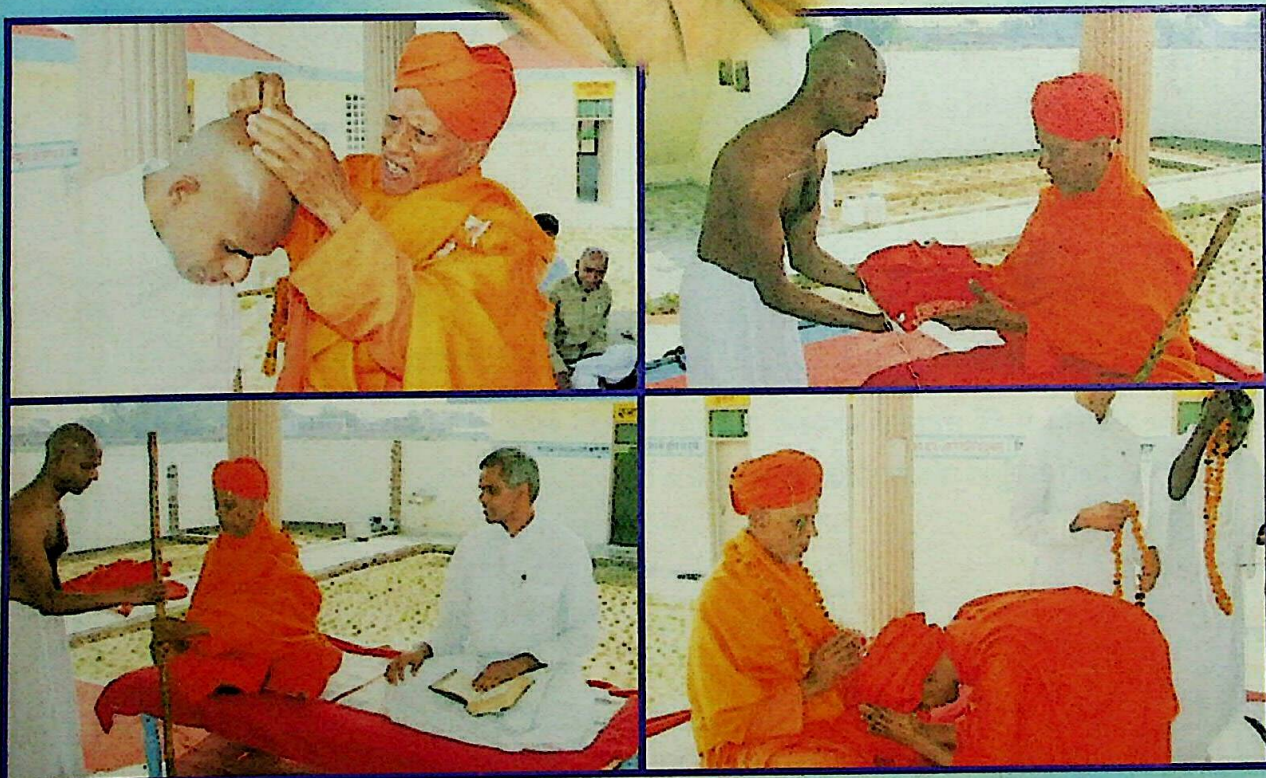
आचार्य विष्वङ्जी की संन्यास दीक्षा की झलकियाँ

॥ ओ३म् ॥

सरस्वती भवन, ऋषि उद्यान, अजमेर
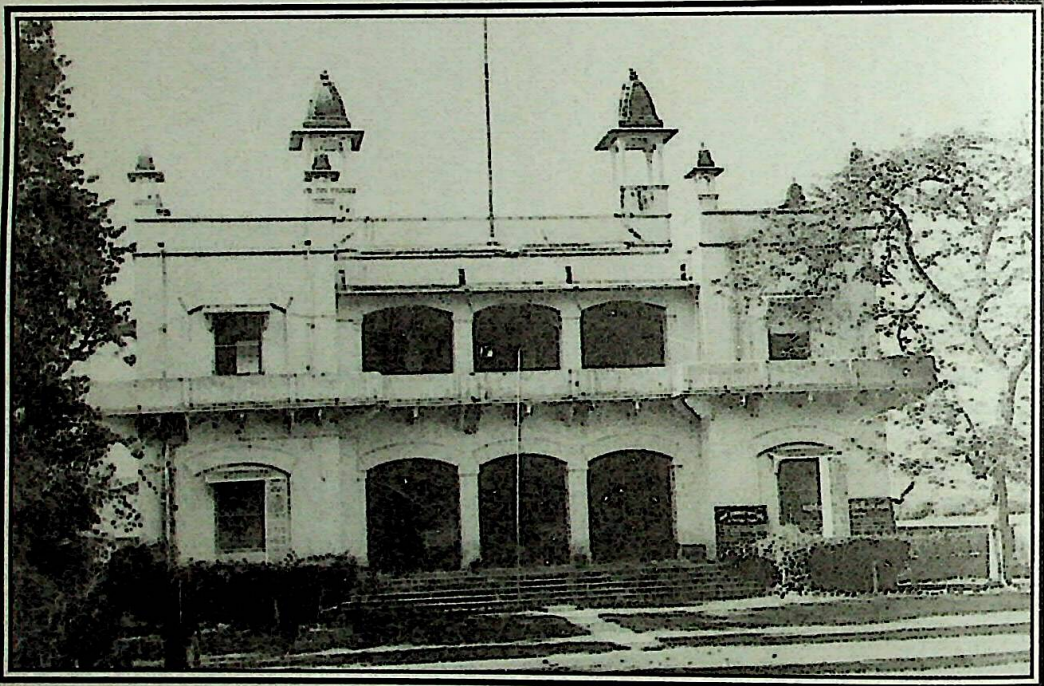
इस भवन में महर्षि दयानन्द सरस्वती की जीवन झांकी चित्रों में अंकित है, एवं स्वामी जी के उपयोग की वस्तुओं की प्रदर्शनी लगाई गई है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी
सभा का मुख पत्र

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसार दुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

RNI. No. ३१५१/५१

वर्ष : ४६ अंक : ६
ज्यैष्ठ २०६२ विक्रम
कलि संवत् ५१०६
जून, २००५ दयानन्दाब्द १८२
सृष्टि सं. १,९६,०८,५३,१०६

परोपकारी

जून २००५

प्रधान संपादक :
गजानन्द आर्य

अवै. सम्पादक :
प्रो. धर्मवीर
चलदूरभाष: ९४१४००६९६४
९४१४००८०८०

प्रबन्ध सम्पादक :
डा. भवानीलाल भारतीय
ओममुनि वानप्रस्थी
ऋषि उद्यान: ०१४५-२६२१८९१
चलदूरभाष: ९८२८०४४८७५

प्रकाशक :
परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर-३०५००१
दूरभाष : २४६०१६४

मुद्रक
वैदिक यन्त्रालय
अजमेर।
दूरभाष : २४६०८३१

वार्षिक शुल्क : साठ रुपए
विदेश में : १५ पाउण्ड/३० डालर
आजीवन (भारत में) : रु ७००

अनुक्रम

Web Site :-
www.paropkarinisabha.com
E.mail address:-
Paropkarinisabha@rediffmail.com

सम्पादकीय

ऐसा क्यों नहीं होना चाहिए

हमारे प्रगतिशील बन्धु सुई की नोक से ऊँट निकालना चाहते हैं। वे बुरा परिणाम नहीं चाहते परन्तु बुरे कार्य को प्रगतिशीलता की निशानी मानते हैं। बुरा करके अच्छे परिणाम की आशा करना दुराशा मात्र है। आज देश में महिलाओं के उत्पीड़न की घटनायें बराबर बढ़ रही हैं, इसके लिए बहुत सारी बातें उत्तरदायी हो सकती हैं, परन्तु इसमें भी जो कारण जिसको ठीक लगता है वह घटना को उसी दिशा में ले जाना चाहता है। दिल्ली में धौला कुंआ पर जो घटना घटी, जोधपुर में जर्मन युवती के साथ जो हुआ, मुम्बई में पुलिस ने जो किया इतनी घटनायें प्रतिदिन घट रही है अत: किसी घटना विशेष को उदाहरण बनाने की आवश्यकता नहीं है।

इस समाज में दो विराधी बातों को बढ़ावा दिया जा रहा है। एक ओर तो हम फ्री-सेक्स, स्त्री स्वातन्त्र्य जैसी बातें विदेशों का अनुकरण कर अपने देश में लागू करना चाहते हैं परन्तु दूसरी ओर वहां की तरह व्यक्तिगत अधिकार और स्वतन्त्रता को स्वीकार नहीं कर पाते। वहाँ कानून इतने कड़े हैं कि जहाँ आप किसी की सहमति से खुले मैदान में बाजार में कुछ भी कर सकते हैं परन्तु वहीं किसी की इच्छा के विरुद्ध आप दबाव तक नहीं डाल सकते, आप की सुरक्षा आपको प्राप्त है। अपने यहाँ कानून गुण्डों की सुरक्षा के लिए बना है वह पीड़ित और शोषित की उतनी ही सहायता करता है जितनी प्रचार के लिए जरुरी है। उत्पीड़क यदि धन और सत्ता के लम्बे हाथ रखता हो तो उससे लड़ाई लड़ने में कानून कमजोर और बेचारा साबित होता है।

हमारे बच्चों और युवाओं पर जो बात सबसे अधिक प्रभाव डाल रही है वह है दूरदर्शन, फिल्म, समाचार, पत्र-पत्रिकायें, नशे की लत आदि। इन सब में आपको स्वतन्त्रता चाहिए तो अपराधी की स्वतन्त्रता पर आप अंकुश नहीं लगा सकते। फिल्म और दूरदर्शन में दिखाने के लिए सेक्स और हिंसा के अतिरिक्त बचा ही क्या है? मनुष्य की दबी इच्छाओं को उभारना इनका मुख्य लक्ष्य है, दबी इच्छायें उभरती हैं और मनुष्य उन्हें पूरा करना चाहता है तो उसे अपराध की दुनिया में प्रवेश करना ही पड़ेगा। हमारे समाज में सभ्यता, शिक्षा संस्कार मनुष्य की इच्छाओं को नियन्त्रित करना सिखाते हैं, संयमित करना सिखाते हैं। आज नियम-संयम की शिक्षा देना पुरतनपन्थी होना समझते हैं। सरकार का सारा पैसा सेक्स और शराब के प्रचार में व्यय हो रहा है। हमारे विज्ञापन एड्स को भयंकर रोग बताते हैं परन्तु इनसे बचने का उपाय संयम नहीं बताते, वे इससे बचने के उपाय में कण्डोम का प्रचार करते हैं। परिवार नियोजन का प्रचार भी इसी पर आधारित है। हमें बच्चों को सेक्स शिक्षा देने की चिन्ता सताती है, अभी तक हमारी सरकार साहस नहीं जुटा सकी किस कक्षा से बच्चों को सेक्स की शिक्षा दी जाये परन्तु ब्रह्मचर्य की शिक्षा देना दकियानूसीपन लगता है। सेक्स की सफलता ब्रह्मचर्य पर ही निर्भर करती है, परन्तु आचरण इसके विपरीत है।

मनुष्य का व्यवहार टुकड़ों में नहीं सुधारा जा सकता। मनुष्य, परिवार, समाज इनमें समन्वय करने वाला व्यवहार ही तीनों की रक्षा कर सकता है। व्यक्ति या समाज के किसी एक वर्ग को ध्यान में रखकर बात करना अधूरा सोच है। कुछ लोग सोचते हैं समाज में उनके बच्चे अच्छे रहें बाकि का चाहे कुछ भी हो, परन्तु ऐसा संभव नहीं है। समाज में, परिवार में सबके अच्छे रहने पर ही कोई अच्छा रह सकता है, नहीं तो बुराई उसके सामने सदा ही रहेगी, वह उससे कब तक बचेगा? यह सोच गलत है, समाज में हमारी जाति, हमारा परिवार बचा रहना चाहिए बाकी से हमें क्या लेना? अपराध जाति व व्यक्ति देखकर नहीं किया जाता। चोर धन देखता है जाति नहीं, उसी प्रकार गुण्डा बदमाश अपनी इच्छा की पूर्ति कहाँ होती है यह देखता है, वह कौन है इस पर उसकी दृष्टि नहीं रहती। यदि रही तो भी इतनी रह

सकती है किस काम को करने में कितना भय है। जेब कतरा किसी तगड़े आदमी की जेब काटने को केवल मार के डर से छोड़ सकता है, जाति के डर से नहीं। दिल्ली में हुए बलात्कार काण्ड को लेकर समाचार पत्रों ने एक आवाज उठाई है। दिल्ली में महिलाओं के प्रति अपराध में उत्तर पूर्वी महिलाओं को निशाना बनाया जाता है। यह क्षेत्रीयता का सोच अपराधी और अपराध के कारणों पर पर्दा डालने वाला है। इसके पीछे केवल इतना कारण हो सकता है, उनका अकेलापन, सहजता और स्वतन्त्रता। इसका दुरुपयोग कहीं की भी महिला के साथ हो सकता है क्षेत्र, जाति आदि से अपराध को जोड़ना अपराध को छोटा करके देखना है।

वास्तव में फिल्म, दूरदर्शन के प्रचार का युवा मस्तिष्क पर प्रभाव नहीं पड़े यह कैसे हो सकता है। आज विज्ञान की प्रगति ने कम्प्यूटर, मोबाइल, इन्टरनेट, वेबसाइट के माध्यम से युवा वर्ग को अपनी इच्छाओं को पूरा करने का क्षेत्र सहज सुलभ करा दिया है। जो कदम जिज्ञासा और उत्सुकता से आगे बढ़ता है वह कब गहरी खाई में गिर जाता है यह न बच्चों को पता चलता है न माता-पिता को, दुर्घटना के बाद चिन्ता करना कोई उपाय नहीं है। आज ये सारे साधन युवकों को इसी ओर आकर्षित कर रहे हैं, इन चीजों के प्रचार से व्यापार की प्रगति जुड़ी हुई है। अच्छाई और बुराई का एक मौलिक अन्तर यही है अच्छाई का सम्बन्ध आत्मा की सन्तुष्टि से है और बुराई का सम्बन्ध शरीर की सन्तुष्टि से, जो कि तत्काल होती है। इसी कारण बुराई के प्रचार से भौतिक लाभ होता है, अच्छाई के प्रचार से समाज में व्यक्ति में सुख शान्ति हो सकती है परन्तु भौतिक=आर्थिक लाभ नहीं हो सकता। शराब पिलाने से पैसा मिलता है, पैसे के लिए सरकार व व्यापारी शराब बेचते हैं, परन्तु शराब से होने वाले परिणाम को वे रोक नहीं सकते, शराब का प्रचार, करके शराब पिलाकर हम समाज को अपराध शून्य बनाना चाहते हैं, यह दुराशा मात्र है। इसको इस घटना से भी समझा जा सकता है- गत दिनों महाराष्ट्र की सरकार ने नाचने वाले क्लब, बार पर प्रतिबन्ध लगाने का फैसला किया तो इसके विरुद्ध आन्दोलन खड़ा हो गया, शिष्ट मण्डल मिले, सोनिया गाँधी से सिफारिश हुई और मामला ठण्डे बस्ते में चला गया, क्योंकि इससे हजारों लोगों की आजीविका जुड़ी हुई है। शराब से आजीविका जुड़ी है, शराब से पैसा मिलता है। नाचघरों से आजीविका जुड़ी है, इनसे सरकार को पैसा मिलता है। जुआघरों से पैसा मिलता है और उससे भी आजीविका जुड़ी है, इसलिए इन पर रोक नहीं लगाई जा सकती, फिर कोई इनके परिणाम पर रोक कैसे लगा सकता है? पाश्चात्य संस्कृति का खुलापन और धन कमाने की निरंकुश भावना मनुष्य को हिंसा और सेक्स का खुला निमंत्रण देती है, जिसका परिणाम आज हमारे सामने है। इस परिस्थिति का तात्कालिक उपाय तो कानून की प्रक्रिया को कड़ा करना ही है, क्योंकि समझदार आदमी ज्ञानपूर्वक किसी बुराई को छोड़ता है तो सामान्य आदमी लज्जा और भय से बुराई से बचता है। बदमाश लोगों के लिए कड़ा दण्ड ही उपाय बचता है। इसलिए मनु महाराज ने कहा है

जहाँ काली लाल आंखों वाला पाप नाशक दण्ड विचरण करता है, वहाँ प्रजा उसके भय से नियन्त्रण में रहती है-

यत्र श्यामो लोहिताक्षो दण्डश्चरति पापहा।
प्रजास्तत्र न मुह्यन्ति नेता चेत्साधु पश्यति॥

-धर्मवीर

नववर्ष का स्वागत

परोपकारिणी सभा, अजमेर के उपप्रधान पं० ओम मुनि ने कहा कि संसार में यज्ञ ही सर्वश्रेष्ठ कर्म है। इसके माध्यम से ही प्राणिमात्र को लाभ पहुँचता है। इसलिए प्रत्येक शुभ कार्य यज्ञ से प्रारम्भ किए जाते हैं। ९ अप्रैल मोदियों के बास, सोजत में नववर्ष उत्सव समिति एवं आर्यसमाज के सहयोग से नूतन वर्ष अभिनन्दन के मौके पर आयोजित नव संवत्सरेष्टि यज्ञ में श्रद्धालुओं को सम्बोधित कर रहे थे।

ईश्वर-प्रणिधान
(प्रवचन से उद्धृत)

स्वामी विष्वङ्

प्रत्येक ईश्वर-भक्त ईश्वर का साक्षात्कार करना चाहता है, ईश्वर का दर्शन करना चाहता है, ईश्वर को देखना चाहता है। संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं उन्होंने प्रभु को प्राप्त करने के लिये अनेकों उपाय बताये हैं। जितने ऋषि हुए हैं उन्होंने भी इसके अनेकों उपाय बताते हुए अनेकों ग्रंथ बनाये, उन ग्रन्थों में एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है 'योग-दर्शन'। यदि संसार में वास्तव में कोई मनुष्य ईश्वर को प्राप्त करना चाहता है, ईश्वर का दर्शन करना चाहता है तो उसकी विधि क्या होनी चाहिए, उसकी पद्धति क्या होनी चाहिए, किस तरह मनुष्य अपने सांसारिक कार्यों को करते हुए, संसार में रहते हुए, ईश्वर को प्राप्त कर सकता है? योग-दर्शन में योग के आठ अंग बनाये यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। योग के आठों अंगों को समझाते हुए महर्षि पतंजलि जी ने अनेकों उपाय ऐसे प्रस्तुत किये जिससे कि आत्मा शीघ्रता से ईश्वर को प्राप्त कर सके। उन उपायों को बताते-बताते उन्होंने अंत में एक उपाय बताया, जिस पर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ। वह उपाय है "ईश्वर प्रणिधान"।

हम कैसे ईश्वर को प्राप्त कर सकें? "ईश्वर प्रणिधान" एक ऐसा उपाय है जिससे जीवात्मा शीघ्रता से ईश्वर को प्राप्त कर सकता है। ईश्वर प्रणिधान का सीधा अर्थ है- समर्पण करना, समर्पित हो जाओ, अपने आप को समर्पित कर दो। अपने आप को हम कैसे समर्पित करें? उसकी क्या पद्धति है? उसको समझाते हुए महर्षि वेद व्यास ने अपनी व्याख्या में अनेक बातें बताई। वैसे तो हम लोग समर्पित होने के बारे में बहुत कुछ सुनते हैं और समर्पित करते भी हैं। दूसरों को भी कहते हैं समर्पित हो जाओ। जब अध्ययन की बात आती है, वहां पर अध्यापक और विद्यार्थी के बीच में यह समर्पण की भावना आती है। माता-पिता अपने बच्चों को अपने प्रति समर्पित होने के लिये निर्देश करते हैं, हमारे प्रति समर्पित हो जाओ, जैसा हम कहें उसी तरह आपको करना है। अध्यापक विद्यार्थी को कहता है कि समर्पित हो जाओ, जैसा मैं कहूँ वैसा ही करो। हम किसी कार्य को करते हैं, किसी के नीचे काम करते हैं, तो ये कहा जाता है आप हमारे प्रति समर्पित हो जाओ, जैसा हम कहें वैसा करो।

यहां एक बात कही जा रही है समर्पित हो जाओ, जैसा हम कहें वैसा आप करो। ये समर्पण है क्या? इसके लिये यहां पर कहा जा रहा है जैसा हम कहें वैसा करो, यानि समर्पण का अर्थ है- आज्ञा का पालन करो जैसा हम कहें वैसा आप करो यह माता-पिता कह रहे हैं, अध्यापक कहता है और समाज में जो भी कार्य करने वाले होते हैं वे सभी यही कहते हैं जैसा हम कहें वैसा करो। यह है समर्पण। और इसी बात को महर्षि वेद व्यास ने समझाने का प्रयत्न किया है- "भक्तिविशेष" शब्द से। आप "भक्ति विशेष" करो, तो आप समर्पित हो जाओगे। "भक्ति विशेष" को महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने स्पष्ट शब्दों में हिन्दी में अभिव्यक्त किया है। उन्होंने कहा- "भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा का पालन करने में नित्य तत्पर रहे।" जिसके प्रति आप समर्पित हो रहे हो, उसकी आज्ञा का पालन करो, उसके निर्देशों का पालन करो, उनके नियमों का पालन करो, यह है समर्पण। इस समर्पण को महर्षि वेद व्यास ने अपने शब्दों में इस रूप में व्यक्त किया है- "सर्वक्रियाणां परमगुरावर्पणं तत्फल संन्यासो वा"। सर्वक्रियाणाम्- जो कुछ भी हम करते हैं, हर काम को, हर क्रिया को परमगुरावर्पणम्- परम गुरु ईश्वर के प्रति समर्पित कर दो। ये ईश्वर प्रणिधान हो जायेगा। जो कुछ भी करते हैं,

सबको समर्पित कर दो। पैसा कमाया, पैसे को भी समर्पित कर दो, मकान बनाया- प्राप्त किया, उसको भी समर्पित कर दो, सोना-चाँदी प्राप्त किया, उसको समर्पित कर दो। जो कुछ भी किया उसको समर्पित कर दो। यदि हमने कोई गलती करी, गलत कर्म किया, गलत चेष्टा की उसको भी समर्पित करो। **सर्वक्रियाणां परमगुरावर्पणम्** जो कुछ भी हमने किया उस सबको प्रभु के प्रति समर्पित कर दो।

एक बात और व्यास जी ने कही **''तत्फल संन्यासो वा''** जो आपने किया उसका फल नहीं चाहो। इस बात को थोड़ा समझना है, फल को न चाहने का अर्थ क्या है? हमने मेहनत की है, पुरुषार्थ किया है, और पुरुषार्थ करके, कुछ काम करके कुछ प्राप्त किया है उसका फल न चाहना? उसका फल न चाहना यानि जो कुछ हमने किया है उसके बदले में हमें कुछ नहीं चाहिए। यदि फल त्याग करने का अर्थ यही है, तो ऐसा कर्म कोई करेगा ही नहीं, फल न चाहे ऐसा तो कोई कर नहीं सकता। करके भी फल न चाहना, तब तो बहुत मुश्किल हो जायेगा, फिर तो कोई कर्म कर ही नहीं पायेगा। फल को त्याग करना यह अर्थ कुछ गलत ढंग से लें तो कोई व्यक्ति ईश्वर प्रणिधान कर नहीं पायेगा। जो कुछ भी कार्य करने पर मिलता है- जड़ पदार्थ- उसको ही अंतिम फल समझ कर कार्य करें, तो उससे आत्मा को पूर्ण तृप्ति नहीं मिलती,. पूर्ण संतोष नहीं मिलता, पूर्ण निर्भयता की प्राप्ति नहीं होती, वह पूर्ण स्वतंत्र नहीं हो पाता है। इसलिये वह फल चाहना, जिस फल को प्राप्त करने से पूर्ण तृप्ति मिले। उस फल को प्राप्त करने की इच्छा रखो जिससे पूर्ण संतोष मिल जाये, पूर्ण संतुष्टि मिल जाये, पूर्ण तृप्ति मिल जाये, पूर्ण प्रसन्नता मिले, पूर्ण निर्भयता की प्राप्ति हो और आनन्द की प्राप्ति हो। ऐसा लगे जो मरे को मिल रहा है बस यही मुझको चाहिए, और कुछ नहीं चाहिये। जो चाहिये था वह मुझे मिल रहा है और किसी चीज की जरूरत नहीं है। ऐसे फल की इच्छा करो।

तो यहां पर ईश्वर प्रणिधान का अर्थ हुआ जो कर्म आपने किया उसे ईश्वर के प्रति समर्पित करो, उसका जो फल है वह ऐसा चाहो जिससे आत्मा की अभिलाषा की पूर्ति हो सके। उसकी पूर्ति होती है ईश्वरीय आनन्द को पाने से। कर्म को ईश्वर के लिये करें, ईश्वरीय आनन्द को प्राप्त करने के लिये करें। लौकिक पदार्थों को, सांसारिक पदार्थों को, जड़ पदार्थों को प्राप्त करने की इच्छा से यदि हम कर्म कर रहे हैं तो फिर ईश्वरीय आनन्द हमको नहीं मिल पायेगा। दोनों में से एक मिल सकता है। यदि सांसारिक पदार्थों से मिलने वाले सुख को ही मुख्य मान करके, उद्देश्य मान करके कर्म करें तो ईश्वरीय सुख नहीं मिलेगा। किन्तु ईश्वरीय सुख को प्राप्त करना चाहते हैं तो सांसारिक सुख अवश्य मिलेगा। इसलिये जो कर्म हम करते हैं उसे ईश्वर के लिये समर्पित करना, ईश्वर के प्रति अर्पित करना। हे प्रभु! इसका फल आप देना और ऐसा फल देना जैसी मेरी इच्छा है अर्थात् मैं पूर्ण तृप्त हो जाऊँ, आपके आनन्द को पा सकूं।

समर्पण कैसे करना है, वह कैसे हो? इसे समझना चाहिए। जैसे हम किसी को पूछते हैं यह मकान किसका है? यह सम्पत्ति किसकी है? ये बेटा किसका है? तो एक भाषा का प्रयोग किया जाता है, यह तो आपका ही है, यह तो आपका ही बेटा है, यह तो आपकी ही संपत्ति है। यह जो बोला जाता है यदि इसे अन्तर्मन से बोलें, अन्दर से बोले तो उसे ऐसा लगेगा जैसे इन सब पदार्थों को सामने वाला ले लेगा। तो मेरा कुछ क्या बचेगा? यह जो मेरापन है या मेरीपन है, मैं और मेरा, मैं और मेरी की स्थिति है यह हमें समर्पण करने से रोकती है। यजुर्वेद में एक मंत्र आता है- **आयुर्यज्ञेन कल्पतां,...............प्राणो यज्ञेन कल्पताम्.............** उसमें यह कहा गया है कि ईश्वर को आप समर्पित करो, जो आपकी योग्यता है वो ईश्वर के प्रति समर्पित कर दो। आपके अन्दर जो बल है, वो ईश्वर के प्रति समर्पित कर दो, आपके अन्दर जो सामर्थ्य है वो ईश्वर के प्रति समर्पित कर दो, जो आप आँखों से देखते हो व जितना भी देखा उसे ईश्वर के प्रति समर्पित कर दो, जो आपने बोला है, वाणी से, सबको

ईश्वर के प्रति समर्पित कर दो, जितना आपने सुना है कानों से, उसको ईश्वर के प्रति समर्पित कर दो, जो प्राणों को ले रहे हो, जो आयु को प्राप्त कर रहे हो उस आयु को भी ईश्वर के प्रति समर्पित कर दो। तो एक-एक चीज को बोल-बोल के आगे मन्त्र में कहा गया है, कि अपने आपको भी ईश्वर के प्रति समर्पित कर दो आत्मा यज्ञेन कल्पताम्। सब कुछ समर्पित कर दो, अपना कुछ नहीं मानो।

व्यक्ति जब ऐसा करने लगता है तो उसको डर लगता है। यदि में सब कुछ समर्पित कर दूँ, सब कुछ ईश्वर के लिए दे दूँ तो मेरे लिए कुछ बचेगा ही नहीं। मैं और मेरा, ये जो भावना होती है, इसके ऊपर चोट आती है और उसको व्यक्ति छोड़ना नहीं चाहता। इसलिये ऊपर से तो बोल देता है कि ये सब आपका है, लेकिन मानता है अपना। जब अपना मानता हैं तो अपने लिए बचाके रखता हैं। उद्देश्य जड़ पदार्थ रहता है, सामने जड़ पदार्थ को रखते हैं, क्योंकि जड़ वस्तु दिखाई भी देती है कि ये मेरे पास है मकान मेरे पास है, सम्पत्ति मेरे पास है, इतना मेरे पास है। वो उसको दिखाई देता है। और जब कहता है कि ये सब आपका है तो सामने वाला यही कहेगा इसको वहाँ दे दो, वहां लगा दो, इसका ऐसा कर दो। ईश्वर भी तो यही कहता है, मैं जैसा कहूँगा, वैसा आपको करना है, किन्तु वैसा हम करने के लिए तत्पर नहीं हो पाते। ईश्वर प्रणिधान करने पर भी समस्त धन रहेगा तो अपने पास ही लेकिन उसे ईश्वर की आज्ञा के अनुरूप प्रयोग करना होगा। उसका सदुपयोग हमको ही करना होता है, ये मानकर कि ये ईश्वर का है। जैसे उदाहरण के लिए एक मकान में किराएदार रहता है। वो किराए-दार किस तरह उस मकान का प्रयोग करता है? इतना अच्छा प्रयोग कि उतना अच्छा तो मकान मालिक भी नहीं कर पाता। बहुत अच्छे ढंग से उसका प्रयोग करता है, बहुत खुल करके उसका प्रयोग करता है। स्वतंत्रता से, अधिक से अधिक प्रयोग करता है और उसका अधिक से अधिक सुख लेने का प्रयत्न करता है, लेकिन अपना नहीं मानता। मकान उसकी के पास है, वह ही प्रयोग करता है और अपना नहीं मानता, उसके बारे में उसकी कोई चिन्ता नहीं रहती। किसी कारण से बिगड़ भी जाए तो उसको दुःख बिल्कुल भी नहीं होता। आंधी आ जाए, तूफान आ जाए, भूकम्प आ जाए और कुछ हो जाए उस मकान को, उसको कुछ भी परेशानी नहीं होती, टूट गया तो टूट गया, फूट गया तो फूट गया, गिर गया तो गिर गया, उसका तो कुछ जा नहीं रहा, अपना तो कुछ माना ही नहीं। ऐसे ही ट्रेन में जाते हैं और हम स्थान आरक्षित करा देते हैं, उसको हम अपना मानते हैं किसी दूसरे को बैठने नहीं देते, यदि किसी कारण से, गलती से या जानबूझ कर कोई बैठता है तो उसको हम उठाते हैं अपना मानकर उसका पूरा प्रयोग करते हैं और जब गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाते हैं तो उसको छोड़ देते हैं और छोड़ते हुए कोई दुःख नहीं होता। तो अपना मानने पर तो सारे के सारे दुःख हो रहे हैं, अपना न मानते हुए ईश्वर के प्रति या और किसी के प्रति अर्पित करते हैं, तो दुःख नहीं होता।

तो प्रणिधान का अर्थ यही हुआ कि जो कुछ हमारे पास है, जितना कुछ हमारे पास है, उसको यदि हमने ईश्वर के प्रति समर्पित किया, हे प्रभु! ये मेरा नहीं आपका है, मैं आपको समर्पित करता हूँ इसका एक बहुत बड़ा लाभ होगा कि वो जैसा हमको कहेगा हम वैसा उसका प्रयोग करेंगे, जिम्मेदारी अपनी नहीं रहेगी। वो कहेगा कि दान दो तो दान देना पड़ेगा यानि उसकी आज्ञा है, हमने ये स्वीकार किया है कि ये आपका है, तो दान दो, अच्छे कामों में लगाओ। जो-जो ईश्वर की आज्ञा है उसके अनुरूप इसका प्रयोग करो। जितना खाने के लिए कहता है, उतना खाओ, जिसे न खाने के लिए कहता है उसे मत खाओ। समर्पण का अर्थ हमने ये किया कि भक्ति विशेष अर्थात् ईश्वर की आज्ञा पालन। जो कुछ भी ईश्वर की आज्ञा है, उस के अनुरूप हमने काम करना शुरु किया और उसके फल की इच्छा नहीं की। जब हमने ईश्वर को चाहा तो हम हर वक्त ईश्वर

को सामने रखेंगे। बताइए मेरे को क्या करना है? अब क्या सोचना है? अब क्या बोलना है? सब कुछ हमने ईश्वर को समर्पित कर दिया, अब इमको अपनी ओर से कुछ भी नहीं करना है, अब तो पूछ-पूछ करके करना है।

उसकी आज्ञा के अनुसार चलना होगा तो पूछना पड़ेगा और पूछना हो तो पूछे जाने वाले को सामने रखना होगा। तो ईश्वर प्रणिधान का दूसरा विभाग है ईश्वर को हर समय सामने रखना। हे प्रभो! आप मुझे देख रहे हो, सुन रहे हो, जान रहे हो। आपकी उपस्थिति में मैं उपस्थित हूँ और आपकी आज्ञा के अनुसार मेरे को करना है। ईश्वर की सतत् प्रेरणा हमको मिलते रहेगी यदि हम सतत् ईश्वर को सामने रखेगें। हमारी एकाग्रता ईश्वर में रहेगी। हम ईश्वर को सामने रखते हैं तो एकाग्र बने रहेंगे। मन ईश्वर में रहेगा तो ईश्वर के आदेश को देख-देख के क्रियाओं को करेंगे।

जैसे छोटा सा बच्चा होता है, उसको जब हम काम कहते हैं, काम कराते हैं तो वो बार-बार हमें देखता रहता है। ठीक करता हूँ? बताओ, ऐसे करूँ? बताओ, ऐसा न करूँ? बताओ, ये ठीक है? बताइए, यहाँ रखना ठीक है? उसको हर बात बताई जाती है, और वो ऐसे ही करता हुआ अपना कुछ मानता ही नहीं और उसको कोई परेशानी भी नहीं होती, कोई तनाव नहीं होता, सारी जिम्मेदारी कराने वाले की होती है। आत्मा को जब हम समर्पित कर देते हैं, अपने आप को जब समर्पित कर देते हैं तो इसका अर्थ है अपनी योग्यता सामर्थ्य को भी समर्पित कर दिया। सब कुछ समर्पित कर दिया।

एक और मोटा सा उदाहरण आपके सामने रखता हूँ कि किस हद तक हमको समर्पिन होना चाहिए। राजा जनक का प्रसिद्ध उदाहरण है, वे महर्षि याज्ञवल्क्य के पास अध्यात्म विद्या सीखने जाते हैं। गुरु शिष्य के बीच में समर्पण की बात है। महर्षि याज्ञवल्क्य पढ़ाते रहे, जनक पढ़ते रहे। जनक को बड़ा अच्छा लगता है, वे बीच-बीच में गुरु जी को कुछ देने के भाव से भर उठते हैं। एक-एक हजार गायें भेंट दे देते थे, ऐसा अनेक बार हुआ। एक बार पुनः जनक में देने का भाव अतितीव्र हुआ और उन्होंने अपने सम्पूर्ण विदेह राज व साथ में स्वयं को भी समर्पित कर दिया, सब कुछ समर्पित कर दिया। महर्षि ने भी देखा कि अब इसमें पूर्ण समर्पण की भावना आई है। सब कुछ समर्पण कर दिया, स्वयं का कुछ नहीं रखा। मैं-मैं नहीं रहा मैं आप हो गया, अब आप जो कहेंगे मुझे वैसा ही करना है। मेरा अस्तित्व होते हुए भी नहीं रहा, मैंने आपको ही समर्पित कर दिया। अब आपकी भक्ति में अर्थात् आज्ञापालन में ही तत्पर रहूँगा। बताये मुझे क्या करना है? यह है समर्पण। इस तरह यदि हम ईश्वर समर्पण करेंगे तो निश्चित रूप से ईश्वर का दर्शन होगा, यही हमको करना है, इसी के लिये महर्षि पतंजलि जी कहते हैं ईश्वर प्रणिधान करो। तो ईश्वर प्रणिधान बहुत महत्त्व पूर्ण उपाय है, प्रभु को पाने के लिये। ओम शम।

वैदिक विद्वानों से आत्मीय निवेदन

देश के ख्यातनाम वैदिक विद्वानों से निवेदन है कि आप स्नेह एवं कृपापूर्वक अपने जो भी विचार लेखबद्ध कर परोपकारी पत्रिका में प्रकाशनार्थ भेजते हैं इसके लिए सभा आपकी आभारी है। निवेदन है कि जो लेख कम्प्यूटर द्वारा मुद्रित कराकर भेजे जाते हैं कृपया उनकी प्रूफ रीडिंग अपने कम्प्यूटर पर ही कराकर सी.डी सभा को भेजने का कष्ट करें ताकि लेख को प्रकाशन क्रम में लाने हेतु समय की बचत एवं सुविधा हो। आप अपना लेख कम्प्यूटर में टाईप करवाकर सी.डी. में भी भेज सकते हैं। कम्प्यूटर में टाइप किया हुआ लेख केवल चाणक्य अथवा योगेश फॉन्ट (भाषा) में ही स्वीकार्य होगा अन्य फॉन्ट में नहीं। जिस किसी के पास कम्प्यूटर टाईप सुविधा उपलब्ध न हो वे पूर्व की भांति हस्तलिखित अथवा टाईप किया हुआ पेपर पर भेज सकते हैं। परोपकारी परिवार आपके इस सहयोग हेतु आभारी होगा।

संपादक

ओ३म् का सोम

डॉ. सारस्वत मोहन 'मनीषी'

ओ३म् बोल ओ३म् बोल ओ३म् बोल-बोल।
ओ३म् का अमृत है अनमोल॥

ओ३म् सा भक्ति विधान नहीं।
ओ३म् सा रोग - निदान नहीं।
ओ३म् सा विश्व - प्रधान नहीं।
ओ३म् सा सूर - संधान नहीं।
ओ३म् से होती थकान नहीं।
ओ३म् सी ऊँची उड़ान नहीं।
ओ३म् के कोई समान नहीं।
ओ३म् से कोई महान् नहीं।

ओ३म् समाधि मिल बिन मोल। मन के सारे पट दे खोल।
ओ३म् बोल ओ३म् बोल ओ३म् बोल-बोल............॥१॥

ओ३म् से बैठ न तू कटके।
ओ३म् से प्यार करो डटके।
ओ३म् से फूल-कली चटके।
ओ३म् खिवैया भव-तटके।
ओ३म् धनी वंशी वट के।
ओ३म् पिता नागर नट के।
ओ३म् से प्रेम हो बेखटके।
ओ३म् ही ईश हैं घट-घट के।

साँस-साँस से पूरा तोल। जीवन रस में विष मत घोल।
ओ३म् बोल ओ३म् बोल ओ३म् बोल-बोल............॥२॥

ओ३म् में गीत - भजन बसते।
ओ३म् में सारे पवन बसते।
ओ३म् में भूमि भवन बसते।
ओ३म् में घन गर्जन बसते।
ओ३म् में होम-हवन बसते।
ओ३म् में प्राण-गगन बसते।
ओ३म् में वेद रतन बसते।

अपना मन हर बार टटोल। देह के ढोल में पोल ही पोल।
ओ३म् बोल ओ३म् बोल ओ३म् बोल-बोलः............॥३॥

ओ३म् में माँ की ममता है।
ओ३म् में ओ३म् की समता है।
ओ३म् सबसे बड़ा अभियन्ता है।
ओ३म् ही विश्व नियन्ता है।
ओ३म् ही विश्व को जनता है।
ओ३म् न रूठता-मनता है।
ओ३म् से बीज पनपता है।
ओ३म् से ओ३म् ही बनता है।

पद्मासन पर बैठ, न डोल। पाप की पीठ में मार दे घोल।
ओ३म् बोल ओ३म् बोल ओ३म् बोल-बोल............॥४॥

ओ३म् ही भाल है चन्दन है। ओ३म् सदा सुख-वर्धन है।
ओ३म् बिना जग निर्धन है। ओ३म् ही सर्वोत्तम धन है।
ओ३म् बिना जग क्रन्दन है। ओ३म् ही सच्चा नन्दन है।
बाहु बिना भुज बन्धन है। ओ३म् बिना जग बन्धन है।

कब हो जाये बिस्तर गोल। ओ३म् बिना सब रापट रोल।
ओ३म् बोल ओ३म् बोल ओ३म् बोल-बोल............॥५॥

ओ३म् किसी का गुलाम नहीं। ओ३म् का नाम अनाम नहीं।
ओ३म् बिना कुछ काम नहीं। ओ३म् सा उत्तम नाम नहीं।
नभ में हैं घनश्याम नहीं। द्वापर के बलराम नहीं।
त्रेता के वो राम नहीं। देहातीता हैं चाम नहीं।

मन के कूप में डाल दे डोल। दाग 'मनीषी' गोल में गोल।
ओ३म् बोल ओ३म् बोल ओ३म् बोल-बोल............॥६॥

ए-१/१३-१४, सेक्टर-११, रोहिणी, दिल्ली-११००८५

कुछ तड़प कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी के लेख:-

श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी महाराज हमारे वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्ध संन्यासी हैं। इन दिनों आपके महिलाओं के अधिकार व कर्मकाण्ड विषयक कई लेख निकले हैं। श्री डा० सुरेन्द्र कुमार जी हमारे एक सुलझे हुए आर्य विद्वान् हैं। मैं न तो कर्मकाण्ड का मर्मज्ञ हूँ और न ही वेद शास्त्र का अधिकारी विद्वान् हूँ परन्तु एक बहुपठित और बहुश्रुत् वेद-भक्त ऋषि-भक्त तो अवश्य हूँ। स्वामी जी के लेख पढ़कर स्वामी सत्यप्रकाश जी का एक कथन अनायास ही स्मरण हो गया। वे कहा करते थे, 'मैं कर्म का तो विरोधी नहीं हूँ परन्तु काण्ड का विरोधी हूँ।'' स्वामी मुनीश्वरानन्द जी के लेख पढ़ सुनकर मैं भी 'काण्ड' से भयभीत हो गया।

सन् १९४८ की घटना है । आर्यसमाज बटाला का वार्षिकोत्सव था । उस उत्सव पर आर्यजगत् के हृदय सम्राट और स्वामी मुनीश्वरानन्द जी के गुरु लौह पुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी भी पधारे। स्वामी जी ने तब ऋषि दयानन्द व आर्यसमाज की विचारधारा व उपलब्धियों पर एक विचारोत्तेजक व्याख्यान देते हुए प्रो० महेश प्रसाद जी आलिम फाजिल की पुत्री कल्याणी देवी के काशी विश्वविद्यालय में धर्म विज्ञान एम०ए० कक्षा में प्रवेश पाने के आन्दोलन की सविस्तार चर्चा की। उस आन्दोलन के सूत्रधार श्री स्वामीजी ही तो थे। सारा आर्यजगत् एक स्वर से कल्याणी देवी जी को अधिकार दिलवाने के लिये बोल रहा था ।

तब विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ० राधाकृष्णन् जी भी आर्यसमाज के लिखने पर पौराणिक पण्डितों के मत के विरुद्ध कछ भी कहने से सुकचा गये। पूज्य मालवीय जी भी पौराणिक पण्डितों का साथ न छोड़ सके। उन्हें भी सार्वदेशिक सभा ने पत्र लिखा। तब आर्यसमाज के सेनानी आर्य सिद्धान्तों का तलस्पर्शी ज्ञान रखने वाले स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज काशी जाकर मालवीय जी से मिले। मालवीय जी श्री महाराज का बहुत सम्मान करते थे। लम्बे संघर्ष के पश्चात् आर्यों की विजय हुई ।

तब आर्यों का पक्ष क्या था?:- पाठक यह जानना चाहेंगे कि तब आर्यसमाज का पक्ष क्या था? जो कुछ आज डॉ० सुरेन्द्र कमार जी लिख रहे व कह रहे हैं, यही आर्यों का पक्ष था। स्वामी मुनीश्वरानन्द जी के पूज्य गुरु के कुशल नेतृत्व में ऋषि मिशन की अपूर्व विजय हुई। इस विजय के उपरान्त डा० राधाकृष्णन् जी की एक पुस्तक Religion and Society प्रकाशित हुई। इसमें स्त्रियों के वेदाध्ययन आदि के अधिकार पर डा० राधाकृष्णन् जी ने खुलकर लिखा और वही प्रमाण इस पुस्तक में दिये जो तब 'सार्वदेशिक' मासिक में हमारे प्रकाण्ड विद्वान् पं० धर्मदेव जी विश्वामार्तण्ड देते रहे। तब पण्डितजी की एक पुस्तक भी इस विषय पर छपी थी, जो अब काशी कन्या गुरुकुल में पहुँचा दी गई है। इसमें भी उपरोक्त अंग्रेजी पुस्तक की चर्चा है।

इस लम्बे आन्दोलन के एक सेनापति पूज्य पं० धर्मदेव जी थे । मैंने इस आन्दोलन की कहानी उनके श्रीमुख से भी सुनी थी। आन्दोलन के दिनों उनका 'सार्वदेशिक' मासिक में लम्बा सम्पादकीय छपा था। मैंने परोपकारी में प्रकाशनार्थ इसे खोजा परन्तु कहीं रख बैठा हूँ, किसी अगले अंक में छपवा दूँगा । पाठक उस लेख को पढ़ेंगे तो पता चलेगा कि तब जो-जो तर्क प्रमाण तिलकधारी पोंगापंथी देते थे, वही हमारे स्वामी मुनीश्वरानन्द जी आज दे रहे हैं । तब पौराणिकों के पास पं० धर्मदेव जी के तर्कों व प्रमाणों का कोई उत्तर नहीं था और आज स्वामी जी के पास श्री डॉ० सुरेन्द्र कुमारजी के लेखों का कोई उत्तर नहीं है । आश्चर्य तो इस बात पर होता है कि स्वामीजी आरण्यक, श्रौत सूत्रों व स्मृतियों की दुहाई देते देते ऋषि दयानन्द को ही गौण कर बैठे, जबकि डा० राधाकृष्णन जी ने Religion and Soci-

ety में ऋषि का नाम लिये दिये बिना प्रमाण व युक्ति ऋषि की ही दी ।

आश्चर्य तो इस बात का भी है वयोवृद्ध पूज्य श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी गुरुवर स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी को भी भूल गये। जिस विजय पर कल तक हमें गौरव था आज उस उपलब्धि को धूलि में मिलाने के लिये स्वामी जी बेचैन हो रहे हैं। बड़े दुःख का विषय है कि जो बातें स्वामी वेदानन्द जी, स्वामी आत्मानन्द जी व स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज सरीखे मूर्धन्य विद्वानों को न सूझीं वे बुढ़ापे में पूज्य स्वामी मुनीश्वरानन्दजी को सूझ रही हैं।

प्रो० महेश प्रसाद जी महाविद्वान् थे, संस्कृतज्ञ नहीं थे । अपनी पुत्री से सम्बंधित इस आन्दोलन में डटकर खड़े रहे । वे भी वही कुछ कहते रहे जो डा० सुरेन्द्रजी लिख रहे हैं । पाठक कुछ प्रतीक्षा करें पूज्य पं० धर्मदेव जी का वह ऐतिहासिक खोजपूर्ण लेख मैं परोपकारी में प्रकाशनार्थ शीघ्र खोज लूंगा। पं० धर्मदेव जी के लेख की एक एक पंक्ति आर्य समाज का सर्वसम्मत मत था। स्वामी जी आयु के प्रकोप से अपनी भूल को स्वीकार करें या न करें ऋषि भक्तों को वेदोक्त मन्तव्यों का डट कर प्रचार करना चाहिये।

स्वामी सत्यप्रकाश जन्म-शताब्दी वर्षः- यह वर्ष स्वामी सत्यप्रकाश जन्म-शताब्दी वर्ष के रूप में मनाना चाहिये। पूज्य उपाध्याय जी ने स्वयं लिखा है कि सन् १९२५ से लेकर उन्होंने ऐसा कोई महत्वपूर्ण लेखन कार्य नहीं किया जिसमें डा० सत्यप्रकाशजी ने पिताश्री को सहयोग न किया हो। सत्यप्रकाशजी विश्वप्रकाशजी दोनों भाईयों ने मथुरा की ऋषि की जन्म-शताब्दी पर आर्य साहित्य प्रकाशन के लिये जो सेवायें की, उसकी भूरि-२ प्रशंसा, तपोधन महात्मा नारायण स्वामीजी ने की थी। दोनों भाईयों ने सब अंग्रेजी हिन्दी पुस्तकों के तब प्रूफ पढ़े थे ।

सत्यार्थ प्रकाश पर सिंध में प्रतिबंध लगा तो उपाध्याय परिवार ने लेखनी का सुदर्शन चक्र चलाकर धर्म रक्षा के लिये प्रशंसनीय कार्य किया । उस समय 'सत्यार्थ प्रकाशः और अंध विश्वास' जैसे सुन्दर व पठनीय लेख लिखकर सत्यप्रकाश जी ने बड़ा यश पाया। विधर्मियों ने वेदों पर अश्लीलता का दोष लगाया तो सत्यप्रकाश ने ऐसा तर्कसंगत सप्रमाण उत्तर दिया कि वेदघात करने वालों की बोलती बन्द हो गई ।

ऋषि दयानन्द को दार्शनिक के रूप में संसार के सामने लाने वाले प्रथम विद्वान् साहित्यकार वैज्ञानिक सत्यप्रकाश ही थे । वे कवि भी थे, विचारक व सुवक्ता भी थे । गवेषक व लेखक के रूप में विश्वप्रसिद्ध थे। माता पिताके आज्ञाकारी सेवक थे। पदों के लिये वे कभी नहीं मरे। संन्यास लेकर घर की ओर मुड़कर फिर नहीं देखा। ईश्वर की सत्ता व स्वरूप, पाषाण पूजा, अवतारवाद, कर्मफल सिद्धान्त, शाकाहार, पुनर्जन्म, त्रैतवाद, स्वप्नवाद पर उनके व्याख्यान जिन्होंने सुने हैं, वे उन्हें कदापि नहीं भूल सकते। देश के स्वाधीनता संग्राम में जेल जाने वाले एकमेव वैज्ञानिक सत्यप्रकाश जी ही थे । वे बड़े प्रेमल व हंसोड़ थे। युवकों को धर्म-सेवा के लिये प्रोत्साहित किया करते थे। उनके सद्गुणों को शताब्दी वर्ष में स्मरण करना चाहिये। पाठकों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस विश्व प्रसिद्ध लेखक ने बच्चों के लिये भी धर्मशिक्षा की एक बेजोड़ पुस्तक लिखी थी ।

आचार्य बलदेव जी की अन्तःवेदनाः-

ऋषि-जीवन की प्रसिद्ध घटना है कि रात के समय ऋषिवर पीड़ा से व्याकुल विह्वल हो उठे । सेवक ने कहा, 'पेट में दर्द है, या सिर में ? मैं किसी कुशल वैद्य डाक्टर को बुलाता हूँ ।' प्यारे ऋषि ने उत्तर दिया, 'इस दर्द की औषधि किसी वैद्य के पास नहीं है । इस देश की दुर्दशा, गो,अनाथ, विधवा के दुखड़े और वेद के तिरस्कार से मैं व्यथित हूँ। मेरी इस पीड़ा का इलाज वैद्यों का चूर्ण या गोली नहीं है'।

आचार्य प्रवर बलदेव जी की मनःस्थिति भी आज वही है । आप का हृदय आर्यजाति की रक्षा के लिये रो रहा है। वे वेद, गो व ऋषि के मिशन की रक्षा के लिये

तड़प रहे हैं । वे सोनीपत में आर्यसमाज व गो माता के लिये रक्तरोदन कर रहे थे तो मेरे नयनों से टप टप अश्रुकण गिरने लगे ।

वे आर्यसमाज के सरकारीकरण व कोर्ट कचहरी परिक्रमा, कुर्सी परिक्रमा, सत्ता व सम्पत्ति पूजन के पाप से आर्यों को बचाना चाहते हैं। लोग तो वेदवाणी को सुनना चाहते हैं । ग्रामों में नगरों में सर्वत्र प्रयास करने पर लोग ऋषि सन्देश को श्रद्धा से सुनते हैं । करने के लिये कार्य बहुत हैं। मैं प्रात: से सांयं तक केवल ऋषि मिशन का ही कार्य करता हूँ, परन्तु जितना कार्य करता हूं उससे कहीं अधिक कार्य करने के लिये मेरे सामने तैयार होता है ।

मित्रों! अपने आपको प्रभु के, वेद के, ऋषि मिशन के अर्पित कर दो । हम अपनी दिनचर्या का सुधार करें। भक्ति भजन, वेद का स्वाध्याय व आत्म चिन्तन का हमारी दिनचर्या में यदि विशेष महत्व नहीं तो हम ढोंगी समझे जायेंगे। कौन हमें उपासक, आस्तिक, आर्य व वेदाभिमानी मानेगा ।

जब तक आर्यसमाज को 'सन्ध्या हवन एण्ड कम्पनी' नहीं बनाया जायेगा तब तक शान्ति, कान्ति व क्रान्ति हम से कोसों दूर रहेंगे । हम वानप्रस्थ व संन्यास तक तो पहुँच गये परन्तु, अमृतवेला में प्रभु की स्तुति, प्रार्थना व उपासना का स्वाद चखने के लिये प्रमाद व भोग न छोड़ सके ।

कभी आर्य लोग झूम झूम कर गाया करते थे :-

रंगन वालया रंगीला मेरा मन रंग दे ।
ऐसा रंग अनूठा होवे दुनिया कर दंग दे ॥

कपड़े रंगन की तो हम में होड़ लग गई परन्तु महात्मा नारायण स्वामी के जीवन की भक्ति की रंगत से हम दूर-दूर भागते रहे। हम मिनिस्टरों को खोज-खोज कर, पकड़-पकड़ कर अपने उत्सवों में व सम्मेलनों में लाते रहे और उनके अगल बगल खड़े होकर फोटो खिंचवा कर इतराते रहे, परन्तु स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज की श्रद्धा, भक्ति व आस्तिकता का रंग हम पर न चढ़ा। हम अपने रंगीन फोटो खिंचवा कर फोटोवीर तो बन गये परन्तु धर्मवीर पं० लेखराम व वीरवर राजपाल, महाराज नाथूराम व श्यामभाई का बलिदान दिवस मनाने से कतराते व घबराते रहे कि ऐसा करने से मियां लोग व वोटपंथी न जाने हमें क्या कहेंगे । यह भय हमको खा गया। हाय! ईश्वर विश्वास की कमी से हम पं० लेखराम की अन्त:वेदना भूल गये। शुद्धि शब्द हमारे मुख से निकलता नहीं। विदेशों में बैठे लोग भारत भूमि के विनाश के लिये आर०डी०एक्स०, अस्त्र-शस्त्र व आत्मघाती आंतकवादी सप्लाई कर रहे हैं। इनसे देश को बचाने के लिये अब तक आपने क्या किया? आपको पदारियों की, मौलवियों की चिन्ता दिन रैन सताती है, परन्तु वेद विरुद्ध विषैल लेखों व आक्रमणों का उत्तर देने से आप क्यों डरते है? साधुवेश में लोग अगड़े पिछड़े की राजनीति कर रहे हैं और स्वयं को आर्यसमाजी भी बताते हैं । सोचिये! बेड़ा पार कैसे होगा ? सत्ता व सरकार की छाया में अमृत की खोज करने वालो! प्रभु की शरण में आओ। उसी की छाया अमृत है।

वेद सदन, अबोहर - १५२११६

निवेदन

सभी प्रबुद्ध आर्यजनों से निवेदन है कि सभा द्वारा यह निर्णय लिया गया है कि एक ऐसा ग्रंथ तैयार किया जा सके जिसके माध्यम से यह जाना जा सके कि आरम्भ से अबतक आर्यसमाजों पर कितने वैधानिक वाद न्यायालय में किए गए, वादी का विवरण उनकी प्रगति एवं निर्णय वैदिक विद्वानों पर भाषण एवं अन्य विषयों पर लेख लिखने पर पाखंड का खंडन करने पर कितने वाद न्यायालय में उनके प्रतिकूल विचाराधीन हैं कितने निर्णीत हुए। इस सम्बन्ध में जो भी प्रामाणिक जानकारी आपको उपलब्ध हो अथवा तत्सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करने के सूत्र आपको ज्ञात हो तो कृपया सहयोग के रूप में जानकारी सभा के पते पर भेजकर हमें अनुगृहीत करें।

आपके इस सद्प्रयास एवं सहयोग से हम सन्दर्भ ग्रन्थ द्वारा आने वाली वैधानिक प्रक्रिया से तत्परता से निपट सकते हैं। आपका सहयोग ही हमारी सफलता है।

सम्पर्क सूत्र :- मंत्री, परोपकारिणी सभा,
दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर

ध्यान-योग एवं रोग निवारण शिविर

स्वामी विष्वङ् जी द्वारा परोपकारिणी सभा के माध्यम से लगाये जा रहे ध्यान-योग एवं रोगनिवारण शिविरों का क्रम सतत चल रहा है। इन शिविरों में जनता उत्साहपूर्वक भाग ले रही है। शारीरिक व मानसिक स्वस्थता की उन्नति, रोग निवारण के साथ आध्यात्मिक प्रेरणा को पाकर जनता द्वारा स्वामी विष्वङ् जी व आयोजकों के प्रति कृतज्ञता अभिव्यक्त की जा रही है।

यदि कोई अपने शहर या कस्बे में इस तरह के आयोजन करवाना चाहें तो परोपकारिणी सभा से संपर्क करें। कार्यक्रम आयोजित करवाने से पूर्व कार्यक्रम की रूपरेखा व झलकियों से परिचित होने के लिये निःशुल्क सी.डी. मंगवा सकते हैं।

सम्पन्न कार्यक्रमों का विवरण

१. हिवरखेड़, तालुका-तेल्हारा, जि. आकोला, महाराष्ट्र में १९ से २५ अप्रैल तक सप्त दिवसीय शिविर सम्पन्न हुआ। यह शिविर श्री उमेश राठी की प्रेरणा से योग संस्कार संरक्षण समिति एवं वेद प्रचारिणी सभा, नागपुर के तत्त्वावधान में श्री नवल किशोर तावरी, श्री लक्ष्मी नारायण तावरी, श्री डॉ. तारापुरे, श्री नवल किशोर, श्री रामलाल तावरी आदि लगभग सौ कार्यकर्ताओं के सक्रिय सहयोग से सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। कार्यकर्त्ताओं के उत्साहपूर्वक पुरुषार्थ के कारण छोटे से कस्बे में लगभग एक हजार शिविरार्थियों को एकत्र किया जा सका व उनकी कुशलतापूर्वक व्यवस्था की जा सकी।

शिविर प्रातः ४.४५ से ७.१५ तक ढ़ाई घंटे प्रतिदिन चला। अंतिम दिन लगभग ४ घंटे कार्यक्रम चला व शिविरार्थियों ने अंत तक रुचि बनाये रखी। शिविर में ४-५ निकटवर्ती ग्रामों के व्यक्तियों ने भी भाग लिया। तेल्हारा नगर पालिका की उपाध्यक्षा ने भी शिविर में भाग लिया व अपनी शारीरिक रोग मुक्ति से प्रभावित होकर घोषणा की कि मैं तेल्हारा तालुका में ऐसा शिविर लगवाऊंगी।

२. होशंगाबाद- मध्यप्रदेश में २ से ८ मई तक आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय नर्मदापुरम् के तत्त्वावधान में आचार्य आनन्द पुरुषार्थी जी के प्रयास से, स्वामी ऋतस्पति जी परिव्राजक (पूर्वनाम आचार्य जगद्देव जी नैष्ठिक) तथा आचार्य सत्यसिन्धु जी के सहयोग से ध्यान रोग एवं रोग निवारण शिविर भली भांति संपन्न हुआ।

शिविर के उद्घाटन में असम राज्य के पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री वीरेन्द्रदत्त ज्ञानी (इन्दौर) मुख्य अतिथि के रूप में तथा होशंगाबाद के अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश श्री ओम्प्रकाश सनरया विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित हुए। शिविर में होशंगाबाद के प्रबुद्ध वर्ग महाविद्यालय के प्राचार्य, प्राध्यापक, अध्यापक, बैंक शाखा प्रबंधक आदि ने भाग लिया। एक मुस्लिम दम्पत्ती ने भी भाग लिया। शिविर में विद्यार्थियों के लिये अलग से व्यवस्था की गई थी। शिविर में लगभग २५० शिविरार्थियों ने भाग लिया।

शिविरार्थियों ने शिविर से अपने जीवन में उत्साह, धैर्य, एकाग्रता की वृद्धि अनुभव की, हताशा-निराशा को दूर किया। कमर दर्द, गर्दन दर्द, मधुमेह आदि रोगों में राहत अनुभव की, शरीर का अतिरिक्त भार कुछ घटाया। अंतिम दिन शिविरार्थियों ने व्यसन-मुक्ति का संकल्प लिया। शिविरार्थियों ने मांग रखी कि यह शिविर आगे एक माह तक लगातार चलना चाहिए।

वेद में विज्ञान की मौलिक परिकल्पनाएं

डॉ. विष्णुकान्त वर्मा

पिछले अंक का शेष...

८. त्रि मूल तत्व विवेक- यह बताया जा चुका है कि तीन तत्व संघात की प्रतीक हैं यहाँ अदिति के तीन अंशभूत आदित्य के स्वरूप का विवेचन करना है। ऋचा (८/४७/९) में इसके नाम स्पष्ट रूप से आये हैं, यथा-

अदितिने उरूष्यात्वदितिः शर्म यच्छतु।

माता मित्रस्य रेवतोऽर्यमणो वरुणस्य च...॥

ऐश्वर्य सम्पन्न मित्र अर्यमन् वरुण की माता अदिति हमें शान्ति प्रदान करे। मूल सत्ता होने से अदिति समस्त उत्पत्ति धर्मी द्रव्यों देवों (प्राकृतिक अवस्थाओं) की माता है, किन्तु ये मित्र, वरुण, अर्यमा मूल आदित्य हैं अदिति के अंगभूत मूल सत्तात्मक तत्व हैं ऐसा ऋचाओं में अनेक प्रकार से प्रतिपादित हुआ है,

यथा-

इमे चेतारो अनृतस्यभूरेर्मित्रो अर्यमा वरुणो हि सन्ति।

इमे ऋतस्यवावृधुर्दुरोणे शग्मासः पुत्रा अदितेरदग्धाः॥

भाष्य- ये सभी मित्र वरुण अर्यमा असत्य के मार्ग से सावधान करने वाले हैं अर्थात् ये सदा सत्य प्राकृतिक नियमानुसार वर्तते हैं। ये अदिति के (पुत्राः) अङ्गभूत (अदब्धाः) अपरिवर्तनशील (शग्मासः) शक्तिशाली (ऋतस्य दुरोणे वावृधुः) सत्य प्राकृतिक प्रवाह के मूल स्थान में वृद्धि को प्राप्त होते हैं। तथा (ऋ. ७/६६/६)

उत् स्वंराजो अदितिरदब्धस्य व्रतस्य ये।

महो राजान ईशते॥

भाष्य- ये मित्र, वरुण, अर्यमा वहाँ अदिति के (स्वराजः) स्वयं के मूल स्थान के (अदब्धस्य व्रतस्य) अपरिवर्तनशील, नित्य नियमों के (महः राजानः) सर्वोच्च प्रकाशक होकर (ईराते) शासन करते हैं।

मित्र वरुण अर्यान्, सर्वोच्च सत्तात्मक तत्व हैं परम सत्ता हैं ये अदिति की मूल स्व सत्ता के अंगभूत हैं तथा मूल स्वयंभू अपरिवर्तनशील ध्रुव गुणों के धारक हैं।

९. विज्ञान पक्ष में प्रकृति का स्वरूपः- विज्ञान के अनुसार प्रकृति के दो प्रमुख वर्ग द्रव्य (मेटर) और विकिरण (इनर्जी) हैं। पुनः द्रव्य के दो वर्ग हैं जिन्हें द्रव्य (मैटर) और (एन्टीमेटर) कहते हैं। द्रव्य के दूसरे प्रकार के वर्गीकरण के अनुसार द्रव्य के दो वर्ग क्रमशः हलके व अपेक्षाकृत भारी कणों के कारण लेप्टन्स एवं हेन्ड्रस कहलाते हैं। लेप्टन्स में ऋण विद्युतीय और हेन्ड्रस में धन विद्युतीय चार्ज्ड कण होते हैं। विकिरण ऊर्जा प्रकाश, ताप, चुम्बक रूप वाली है। इस प्रकार विज्ञानानुसार प्रकृति ऊर्जा, मेटर, एन्टीमेटर या ऊर्जा, धनात्मक चार्ज्ड कण तथा ऋणात्मक चार्ज्ड कण इन तीन रूपों वाली हैं।

१०. मित्र, वरुण, अयर्मा का स्वरूप निर्धारण- यह देख लेने पर कि प्रकृति का वेदानुसार त्रिवर्गी होना विज्ञान समर्थित है अब मित्र, वरुण, अर्यमन् क्या हैं यह देखना है।

विज्ञान के अनुसार जब ऋणात्मक इलेक्ट्रान का एक कण धनात्मक प्रोटान से संयोग करता है तो उदासीन न्यूट्रान का यौगिक कण बनता है, किन्तु यह संरचना अस्थायी होती है पर जब एक एन्टी इलेक्ट्रान न्यूट्रिनो नामक कण अस्थायी इलेक्ट्रान प्रोटान यौगिक में मिल जाता है तब वह न्यूट्रान स्थायी हो जाता है। अब ऋचा (७/३३/१०) देखिये-

विद्युतो ज्योतिः परि सञ्जिहानं मित्रावरुणा

यद पश्यतां त्वा।

ततेजन्मोतैकं वसिष्ठागरत्यो यन्त्वा विश आ जभार॥

भाष्य - (विद्युतः ज्योतिः) इलेक्ट्रिक चार्ज (सं) समान रूप से (परि) पूर्णतः (जिहान) परित्याग किये हुए मित्र वरुण ने जैसे तुझे देखा अर्थात् परस्पर सम्मुख हुए (तत् ते जन्म) वह तेरा जन्म है (किन्तु यह जन्म अस्थायी होता है)। (उत् एक) और दूसरा जन्म हे वसिष्ठ वह है (यत् त्वा) जब तुझे अगस्त्य (विश आ जभार) परमाणु प्रजा धारण करने में समर्थ बनाता है।

मित्र वरुण के कण समान मात्रा में विद्युत् परित्याग करते हैं तब वसिष्ठ अर्थात् न्यूट्रान बनता है अर्थात् मित्र वरुण ऋणात्मक धनात्मक बराबर-बराबर विद्युत् चार्ज वहन करते हैं उनके संयोग से उसे यौगिक न्यूटान बनता है वह अस्थायी होता है अर्थात् शीघ्र विखंडित हो जाता है किन्तु जब अगस्त्य (विज्ञान का एन्टी इलेक्ट्रान न्यूट्रिनो) इसमें आकर मिल जाता है तो यह स्थायी हो जाता है और अनेक प्रकार के परमाणु रचना में नाभिक बनाता है। इस प्रकार मित्र वरुण ऋणात्मक व धनात्मक विद्युत वाहक कण संघात सिद्ध होते हैं। एक सभी प्रकार के ऋणात्मक कणों का समूह है तो दूसरा सभी प्रकार के धनात्मक कणों का समूह।

११. न्यूट्रान रचना विज्ञान- (ऋचा१७/ ३३/ १३) में वसिष्ट की रचना का विज्ञान है यथा-

सत्रे ह जाताविषिता नमोभिः कुम्भे रेतः सिषिचतु समानम्।

ततः ह मान उदियाय मध्यात् ततो जातमृषिमाहुर्वसिष्ठम्॥

भाष्य- (ह) प्रसिद्ध है कि (कुम्भे) किसी उपयुक्त पात्र में (जातो इषिता) उत्पति के इच्छुक मित्र वरुण (रेतः समान् सिषिचतु) कण समान मात्रा में मिलावें (ततः सत्रे ह)

वेद में विज्ञान की मौलिक परिकल्पनाएं

इस प्रकार संगतिकरण में निश्चय ही (मध्यात् मान उत इयाय) उदासीन (कण) वहाँ होता है (ततः जातं वसिष्ठ ऋषिम् आहुः) इस प्रकार उत्पन्न हुए को वसिष्ठ ऋषि कहा गया है।

ऋषि शब्द ऋष् गतौ धातु से गमनशील पदार्थ बोधक है इसी अर्थ में यह वचन (यजु. ३४/५५) है

सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे।

१२. अयर्मा विकिरण है

निरुक्त (११-२३) के अनुसार के अर्यमाऽऽदित्यः अर्वना प्रकाश है।

अर्यमा के स्वरूप पर ऋचा (१०/६४/५) स्पष्ट प्रकाश डालती है -

दक्षस्य वादिते जल्मनि व्रते राजाना मिवावरूता विवाससि।

अतूर्तपन्या पुरुरथो अर्यमा सप्त होता विषरूपेषु जन्मसु॥

भाष्य - हे अदिते। तुझसे (दक्षस्य जन्मनि) प्रारम्भिक सृष्टि उत्पादक सामर्थ्य के उत्पन्न होने पर मित्र वरुण (सृजन में) परस्पर स्पर्धा करते हैं (वृते) उस कर्म में (अतूर्त पन्या, दिवादि तुर=मारना) न मारे गये अविचलित मार्ग से चलने वाला (सप्त होता) सप्त रंगी किरण रूप आहुति वाला। अयर्मा (विषु रूपेषु जन्मसु) अनेक रूपों में प्रकट होने पर (पुरूरथः) अनेक रमण साधनों से युक्त होता है।

विदित है कि प्रकाश अविचलित मार्ग अर्थात् सरल रेखा में चलता है, प्रकाश सप्त रंगी किरणों में विभक्त होता है। जगत् के विधि रंगमयी रूप इन्हीं किरणों का खेल हैं।

इस प्रकार अर्यमा प्रकाश विकिरण सिद्ध होता है तथा मित्र वरुण ऋणात्मक व धनात्मक विद्युत् वाहक कण समुच्चय है। इन तीनों की समग्र सत्ता अदिति प्रतीक से कही गयी है। व्यक्तिगत रूप से ये तीन प्रमुख आदित्य हैं, भौतिक जगत् के मूल कारण हैं।

१३. सृष्टि की उत्पत्ति प्रलय का अनादि अनन्त क्रम

विज्ञान का ज्ञान वर्तमान सृष्टि तक सीमित है इसके बाहर उनका ज्ञान नगण्य है। किन्तु वेद के अनुसार सृष्टि प्रलय का क्रम दिन-रात की तरह अनन्तकाल से चला आ रहा है। वेद में सृष्टिकाल को उषा और प्रलयकाल को नक्तम् कहा गया है उदाहरण के लिये ऋचा है-

समानो अध्वा स्वस्त्रोरनन्तरमन्यान्या चरतो देव शिष्टे।

न मथेते न तस्थतुः सुमेके नक्तोषासा समनसा विरूपे॥

(स्वस्त्रोः) दोनों बहनों का (अध्वो) मार्ग (अनन्तः समानः) अनन्त है समान बराबर अवधि (तं देव शिष्टे) उस मार्ग का ईश्वरीय आज्ञानुसार (अन्या-अन्या चरतः) पृथक्-पृथक् मन से विचरण करती हैं अर्थात् एक के पीछे एक आती हैं (विरूपे) एक दूसरे के विरुद्ध स्वभाव वाली (नक्तोषासा) प्रलय रात्रि और उषाकाल (समनसा) समान चित्तवाली (सुमेके) सुसंगत होकर (न मथेते न तस्थतुः) न मार्ग पर डगमगाती है न रुकती हैं।

प्रह्लाद स्मारक वैदिक व्याख्यान माला: तृतीय स्तबक

स्पष्ट है कि यहाँ पार्थिव दिन-रात की बात नहीं हो रही है। सूर्य उषा का काल रात्रि के बराबर नहीं होता तथा सूर्य संचालित उषा के अनन्तर रात्रि नहीं आती तथा 'अन्या-अन्या चरतः' पद भी चरितार्थ नहीं होता अतः इसे सूर्य उषा पर घटाना वेद विज्ञान की घोर अवेहलना है। वेद का उषा देवता सृष्टिकाल का प्रतीक है उषा की किरण का उद्गम सृष्टि सृजन के प्रभात का आगमन है और उषा काल का अन्त प्रलयकाल के आगमन का काल है।

१४. महाविस्फोट से सृजन का प्रारम्भ

विज्ञान के अनुसार जगत् रचना का प्रारम्भ आज से लगभग १० से २० अरब वर्ष पूर्व एक विस्फोट से हुआ जिसे बिग बैंग कहते हैं। उस समय जगत् में जितना पदार्थ है वह एक महामंडल के रूप में एकत्र हो गया था और यह पिण्ड प्रज्वलित हो गया था जिसमें एक विस्फोट जैसी घटना हुई। उस समय द्रव्य की मात्रा इतनी सघन थी कि एक घन सेन्टीमीटर की मात्रा ४ हजार मेट्रिक टन थी और ताप अरबों डिग्रीसेन्टीग्रेड था। उस समय पदार्थ क्वान्टम अवस्था में था उस समय पदार्थ के मेटर भाग (मेटीर और एन्टीमेटर अर्थात् अन्य वर्ग पार्टिकल्स भाग) और विकिरण (ऊर्जा) के मध्य निरन्तर मंथन हो रहा था।

जिसे प्रामाणिक काल कहते हैं उस समय आठ प्रकार के मौलिक कण विद्यमान थे। इनके नाम हैं इलैक्ट्रान, प्रोटान, न्यूट्रान, पाजीट्रान, म्यूओन, एन्टीम्यूओन, न्यूट्रिनो। उस समय पदार्थ तीव्र गति से प्रसारित हो रहा था और इस कारण तापमान तीव्र गति से गिर रहा था। महाविस्फोट के ३ मिनिट के बाद तापमान गिरकर १ अरब डिग्री सेल्सियम हो गया था। अभी तक द्रव्य में परमाणु तो क्या परमाणु की नाभि भी नहीं बनी थी। किन्तु तापमान १ अरब डिग्री होने पर स्थिति न्यूट्रान प्रोटोन संयोग लिये उपयुक्त हुआ ओर हीलियम नाभिक अस्तित्व (दो न्यूट्रान+दो प्रोटोन कण का यौगिक) में आये। महाविस्फोट के ३० मिनिट बाद मूलभूत तरल २६% हीलियम नाभिक और ७४% हाईड्रोजन नाभिक (केवल प्रोटान कण) में परिवर्तित हो गया इस मिश्रण को कारिस्मक मेटर कहते हैं, जिसकी वैदिक संज्ञा अपां नपात् है।

यह स्थिति ९ लाख वर्ष तक रही। इस अन्तराल में तापमान गिरकर ४ हजार डिग्री सेल्सियस या उससे भी कुछ कम हो गया। यह तापक्रम परमाणु नाभि में इलेक्ट्रान पार्टिकल के संयोग के लिये उपयुक्त था। इस काल में एक ओर जहाँ परमाणु रचना हुई वहीं दूसरी ओर नक्षत्रों और ग्रहों की उत्पत्ति हुई, यही काल सूर्य पृथ्वी की उत्पत्ति का है। ध्यातव्य है कि मेन्डलीफ पीरियाडिक टेबल के अनुसार परमाणु वेलेन्सी के आधार पर सप्तवर्गी हैं। (क्रमशः)

देश व्यापी वेद प्रचार

परोपकारिणी सभा के कदम दुर्गम छत्तीसगढ़ के वनांचलों की ओर बढ़े

परोपकारिणी सभा एवं छत्तीसगढ़ प्रांतीय आर्य प्रतिनिधि सभा रायपुर दुर्ग के समन्वित सहयोग से माह अप्रैल ०५ में छत्तीसगढ़ के दुर्गम वनांचलों को लक्ष्य बनाकर १ माह का सघन वेद प्रचार कराया गया। स्वामी रामानन्द सरस्वती के नेतृत्त्व में पं० सत्यप्रकाश आर्य पटना, पं० शंकरदयाल शर्मा भजनोपदेशक एवं तबला वादकों के सहयोग से दुर्गम पहाड़ी वनांचलों में वेद प्रचार कार्यक्रम के माध्यम से लोग आकर्षित हुए एवं वैदिक सिद्धान्तों से उनका परिचय हुआ।

गैरों की बात नहीं है ये किस्सा है अपनों का

स्वामी रामानन्द सरस्वती द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार कांकेर (बस्तर) में श्रीमती नीलम पारुथी एवं वरिष्ठ नागरिक श्री परिहार जी के अथक परिश्रम से वेद प्रचार कार्यक्रम नगर के विख्यात होटल माँ शारदा में आयोजित किया गया एवं गणमान्य नागरिकों की उपस्थिति में सफलतम रूप से संपन्न हुआ। श्रीमती नीलम पारुथी एवं श्री परिहार जी द्वारा बड़े व्यथित भाव से बताया गया कि यहाँ अवैध एवं अवैधानिक रूप से एक व्यक्ति विशेष का आर्यसमाज की संपत्ति पर बेजा कब्जा है। नगर में लोग इतने आतंकित हैं कि कोई साथ देने वाला नहीं मिलता। सभाएँ इस मामले में कोई रुचि नहीं लेतीं जो भी कर रहे हैं हम ही कर रहे हैं, मामला न्यायालय में विचाराधीन है। आर्यसमाज जहाँ वैदिक उद्घोष होना चाहिए वहाँ प्रतिमा पूजन को प्राथमिकता दी जाती है। सारे पाखण्ड एवं अंधविश्वासों के क्रियान्वयन का मंच आर्यसमाज को बना दिया गया है, वैधानिक रूप से आर्यसमाज के पदाधिकारियों को निष्कासित भी किया गया किन्तु वे अपना अवैध कब्जा बनाए हुए हैं एवं बाहुबल के आधार पर आर्यसमाज के सिद्धान्तों की हत्या कर रहे हैं।

स्वामी रामानन्द के सुझाव के अनुरूप नगर के वरिष्ठ एवं संभ्रान्त नागरिकों द्वारा संकल्प लिया गया कि हम एक महिला आर्यसमाज का गठन करेंगे एवं वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार से एक सशक्त मंच बनाकर सत्य की लड़ाई लड़ेंगे।

हम क्या करें हमें मालूम नहीं! न किसी ने बताया!

रायगढ़ जिले के वनांचल में स्थित ग्राम बेसीमुड़ा में प्रचार-प्रसार के दौरान कार्यक्रम में अज्ञानतावश अवैदिक परंपरा के अनुसार चित्र पूजन से कार्यक्रम आरम्भ करने का प्रयास किया गया जिस पर अपनी तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए स्वामी रामानन्द जी द्वारा इसे रोका गया, आर्यसमाज से सम्बद्ध आयोजक ने बड़े ही मार्मिक शब्दों में अपनी व्यथा बताते हुए कहा कि हमारे क्षेत्र में प्रचारक आते ही नहीं। हमने केवल सुना था कि आर्यसमाज अच्छे लोगों का संगठन है हमने भी आर्यसमाज बनाया, न तो उसके सिद्धान्तों से हम परिचित हैं और न किसी ने कराया , हम आभारी हैं आर्य प्रतिनिधि सभा दुर्ग एवं परोपकारिणी सभा अजमेर के जिनके मार्गदर्शन से आज हमने जाना कि वैदिक सिद्धान्त क्या हैं, अब से ऐसी भूल नहीं होगी।

दो मुट्ठी अनाज और एक दो कंबल बांटने से शोषण व गरीबी नहीं मिटती

उड़ीसा, उत्तर प्रदेश एवं झारखण्ड प्रदेशों के सीमावर्ती क्षेत्रों में जनसंपर्क एवं प्रचार के कालांश में स्वामी रामानन्द ने जो देखा व जाना उसके अनुसार इस क्षेत्र के लोगों का शोषण स्थानीय उद्योगपतियों द्वारा किया जाता है। वन क्षेत्रों की बहुमूल्य उपज, औषधियों एवं वनस्पतियों को ग्रामवासियों की अशिक्षा एवं उनके अज्ञान के कारण वनोपजों को औने-पौने दामों में खरीदा जाता है एवं वहाँ के निवासियों को शराब पीने की व बनाने की खुली छूट मिलने के कारण शराब के सेवन ने उन्हें अकर्मण्य एवं गरीब बना रखा है। नैतिकता एवं संस्कार उनसे कोसों दूर हो गए हैं। ग्राम लिबरा, बेसीमुडा, शरम देगा, होरागुडा एवं आसपास के क्षेत्रों में इतनी भीषण गरीबी है कि ईसाई मिशनरियाँ सस्ती सुविधा के नाम से उनका धर्मांतरण कराती हैं। इस मुद्दे पर व्यापक विचार विमर्श के बाद जो तथ्य सामने आए उनके अनुसार ग्रामवासियों ने बताया कि कुछ लोग आते हैं हमसे सहानुभूति दिखाकर भीख के रूप में दो मुट्ठी अनाज कुछ कंबल देकर कुछ ऊँचे आदर्शों का भाषण पिलाकर चले जाते हैं, इससे क्या हमारी गरीबी और शोषण दूर होगा? आप आए हैं कुछ ठोस कार्य करिये। आपकी सभा और आपका ऋषि संसार के उपकार का संकल्प लेता है, नियम बनाता है आप हम पर इतना उपकार कीजिए कि हमें स्वावलंबी एवं शिक्षित बनाइए ताकि गरीबी शोषण एवं धर्मांतरण पर अपने आप स्व विवेक रोक लगे। ग्राम होरो गुडा के ग्रामवासियों ने इस कार्य को आरम्भ करने हेतु ग्राम पंचायत एवं ग्राम सभा से सर्वसम्मत प्रस्ताव पारित कर ५ एकड़ का भूखंड परोपकारिणी सभा को प्रदान किया। सभा द्वारा प्रयास कर इन क्षेत्र के लोगों को स्वरोजगार बनाने हेतु शासकीय अनुदान एवं स्वयं के सहयोग के माध्यम से उन्हें स्वावलंबी शिक्षित एवं आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया जाएगा।

आर्य प्रतिनिधि सभा रायपुर दुर्ग एवं परोपकारिणी सभा के सहयोग से भविष्य में समय-समय पर दुर्गम वनांचलों में सघन वेद प्रचार का संकल्प लिया गया।

क्या सपत्नी गृहस्थ ही ऋत्विक् कर्म का अधिकारी है?

सुश्री आचार्या सूर्या देवी चतुर्वेदा

'वादे वादे जायते तत्वबोधः' इस वृद्धोक्ति को अनुप्राणित करने वाला 'ऋत्विक् कर्म के अधिकारानधिकार' का वाद लगभग १ वर्ष से आर्यजगत में अहं भूमि बना हुआ है । इस वाद में अङ्गुलि गण्यों का मन्थन है कि 'ऋत्विक्कर्म का अधिकारी मात्र गृहस्थी' ही है। इसी मन्थन को प्रवृद्ध करते हुए सहारनपुर निवासी वैदिक पुरोहित श्री आचार्य हरपाल सिंह जी आर्य का 'ऋत्विज् बनने का अधिकारी केवल सपत्नी गृहस्थ विद्वान् है' इस शीर्षक से एक आलेख 'परोपकारी' में छपा है।

लेखक ने अपने लेख में उन्हीं कथितानुकथित मन्तव्यों का ही समर्थन किया है, जो उत्तर प्रत्युत्तर की धारा से बाँधे जा चुके हैं। शीर्षक के पश्चात् लेख प्रारम्भ करते हुए लेख लिखते हैं -

'इसके अतिरिक्त तीनों आश्रमी ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी तथा संन्यासी एवं पत्नि रहित गृहस्थ यज्ञ कराने के अधिकारी नहीं है।'

विद्वान् पुरोहित का तात्पर्य स्पष्ट है कि पत्नी सहित गृहस्थ ही यज्ञ कराने का अधिकारी है, अन्य कोई नहीं। अपने कथन की सिद्धि में सर्वप्रथम अर्थसहित अर्थवेद का मन्त्र प्रस्तुत किया है, यथा-

'ये देवानामृत्विजो ये च यज्ञिया येभ्यो हव्यं क्रियते भागधेयम् ।

इमं यज्ञं सह पत्नीभिरेत्य यावन्तो देवास्तविषा मादयन्ताम् ॥

अथर्व. १९/५८/६ ॥

अर्थात् इमम्- इस, यज्ञम्- यज्ञ में, यावन्तः- जितने, तविषा- बड़े विद्वान्, ये- जो, देवानाम्- विद्वानों में, ऋत्विजः - सब ऋतुओं में यज्ञ कराने वाले, च- और, ये- जो, यज्ञियाः- पूजा सत्कार के योग्य हैं और येभ्यः- जिनके लिए, हव्यम्- देने योग्य, भागधेयम्- भाग, क्रियते- करते हैं, सहपत्नीभिः- पत्नियों के साथ, एत्य- यहाँ घर में आकर, मादयन्ताम्- हमें प्रसन्न करें ।

अतः यज्ञ कराने वाले ऋत्विज् सपत्नी ही गृहस्थ विद्वान् ही अधिकारी हैं।

उत्तर- मन्त्र में 'सह पत्नीभिः' शब्दों को देखकर लेखक ने यह उपर्युक्त तात्पर्य लगाया है, जबकि यथार्थ में मन्त्र का यह निष्कर्ष नहीं है। लेखक के तात्पर्य कथन पर कुछ कहने से पूर्व उनके द्वारा 'शीर्षक से लेकर तात्पर्य पर्यन्त' प्रयुक्त 'सपत्नी' शब्द ही कथन की अपेक्षा रखता है । पुरोहित जी के सपत्नी प्रयोग ने तो अधिकानधिकार के वाद को एक और नई दिशा दे दी । सपत्नी गृहस्थ= नाना पत्नियों वाला गृहस्थ ही पुरोहित जी की दृष्टि में यज्ञ कराने का अधिकारी है । भला बताइये जिन मान्य पुरोहित जी यह ही ज्ञात नहीं, कि सपत्नी का क्या अर्थ है, उनका तात्पर्य भी कितना प्रामाणिक होगा, यह सहज अनुमानगम्य है । 'सपत्नी' शब्द के समानःपतिःयस्याःसा सपत्नी अर्थात् प्रतिद्वन्द्विनी स्त्री (सौत लोकभाषा में)अर्थ से सभी सुपरिचित हैं, और पत्नी सहित अर्थ कथन के लिए यह पत्न्या (रूप) 'सपत्नीक' शब्द प्रयोग होता है, इससे भी कोई अनभिज्ञ नहीं है।

इसी प्रकार श्री हरपाल जी ने अनाधिकारी के स्थान परअनाधिकारी शब्द का ही सर्वत्र प्रयोग किया है जो 'पुर एनं दधाति इति पुरोहितः' निरु. २/३/१२, इस यास्कोक्त पुरोहितत्व परिभाषा को विनष्ट करता है। अस्तु

लेखक को ज्ञात होवे 'पत्नी' शब्द केवल 'पुरुष की स्त्री मात्र' इस अर्थ का सही वाचक नहीं है, अपितु 'पत्नी' शब्द के विविध अर्थ है, यथा -

१. यस्मिन् यस्मिन् द्रव्य या याः शक्तयः सन्ति तास्तास् तेषां द्रव्याणां पत्न्य इव इति उच्यन्ते ।

दया. भा. ऋ. १/२२/९ ॥

अर्थात् जिस-जिस द्रव्य में जो-जो शक्तियाँ हैं वे-वे उस द्रव्य की पत्नियों के समान है, यह कही जाती हैं।

यहाँ महर्षि दयानन्द ने मन्त्र में आये 'पत्नी' शब्द का अर्थ 'शक्ति' किया है । जबकि मन्त्र में 'पत्नी' शब्द के साथ 'देवानाम्' शब्द भी आया हुआ है, पुनरपि 'पत्नी' शब्द का महर्षि ने 'पुरूष की स्त्री' अर्थ नहीं किया । महर्षि ने पदार्थ में और भी स्पष्ट लिखा - '**तत् सामर्थ्यस्य पत्नीति संज्ञा विहिता**', अर्थात् उस-उस सामर्थ्य की 'पत्नी' यह संज्ञा विहित की गई है ।

२. यज्ञस्य आत्मा यजमानः श्रद्धा पत्नी ।

तैत्ति. आ. १०/६४/१ ॥

अर्थात् यज्ञ की आत्मा यजमान है, और श्रद्धा पत्नी है। यहाँ पत्नी का अर्थ श्रद्धा है ।

३. लेखक ने अपने उद्धृत मन्त्र में जिन वेद भाष्यकार का सहारा लिया है, उन्होनें भी **पत्नीभिः = पालनशील शक्तियों से**, अथर्व० ५/२६/४ इस स्थल में 'पत्नी' का 'शक्ति' अर्थ किया है ।

उपर्युक्त अन्वेषण से सिद्ध है कि 'पत्नी' शब्द '**शक्ति**' आदि अर्थो का भी वाचक है, अत: लेखक द्वारा उद्धृत मन्त्र में '**पत्नी**' शब्द '**पुरूष की स्त्री**' इस रुढ. अर्थ का ही वाचक है यह तात्पर्य नहीं निकाला जा सकता । ज्ञात हो, उद्धृत मन्त्र का 'पत्नी' शब्द 'शक्ति' व 'पुरुष की पत्नी' दोनों अर्थो का वाचक है एवं अन्वाचय शिष्ट सम्बन्ध वाला है । अन्वाचयशिष्ट का अर्थ है '**मुख्य कार्य के साथ गौण कार्य का कथन**।' तो इस प्रकार जिनकी पत्नियां होगी, उनके साथ लोक प्रसिद्ध 'पत्नी' अर्थ सम्बन्ध बैठेगा और अन्यों के साथ शक्ति व श्रद्धा आदि का सम्बन्ध जाना जायेगा, क्योंकि मन्त्र में ऋत्विक् आदि के आगमनपूर्वक अनुष्ठित यज्ञ की पूर्णता व प्रसन्नताकरण मुख्य प्रयोजन कहे जा रहे हैं आने वालों का सहचर्य आगमन तो गौण है । कारण कि '**स्वश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्**' यजु० १८/१, सुख मुझे यज्ञ से प्राप्त होवे । सुख प्राप्ति की यह सामान्य अभिलाषा है अत: आने वालों में छोटे-बड़े, गृहस्थी, ब्रह्मचारी, संन्यासी आदि सभी आश्रमी होगें ।

अन्वाचयाशिष्ट सम्बन्ध को अनुभव करने में वैयाकरण समर्थ होते हैं, यानी यह सम्बन्ध व्याकरण से ज्ञात होता है । इसीलिए मन्त्रों का अर्थ जानने के लिए जहाँ निरुक्त ज्ञान आवश्यक है, वहीं निरुक्त ज्ञान के लिए व्याकरण ज्ञान की अनिवार्यता स्वीकार की गई है । महर्षि यास्क निरुक्त के अनधिकारी का कथन करते हुए लिखते हैं -

नावैयाकरणाय। निरु. २१/१/४॥

अर्थात् जो व्याकरण नहीं जानता, उसके लिए निरुक्त का उपदेश न करें ।

व्याकरण में अन्वाचयशिष्ट के उदाहरण भरे पड़े हैं, जैसे '**कर्त्तुः क्यङ्सलोपश्च**' पा. ३/१/११ अर्थात् उपमानवाची सुबन्त कर्त्ता से आचार अर्थ में क्यङ्. प्रत्यय होता है और सकार का लोप होता है ।

सूत्र में क्यङ्. प्रत्यय विधि एवं सकार लोपविधि इन २ विधियों का निर्देश है । यहाँ दोनों विधियों का सामान्य निर्देश होने पर भी क्यङ्. प्रत्यय सभी उपमान वाचियों से होगा और सलोप का सम्बन्ध जहाँ 'स्' होगा, वहीं बैठेगा, सर्वत्र नहीं ।

इसी प्रकार '**भृशादिभ्यो भुव्यच्वेर्लोपश्चहलः**' पा० ३/१/१२ ॥ अर्थात् अच्व्यन्त भृशादि प्रातिपदिकों से 'भवति' अर्थ में क्यङ्. प्रत्यय होता है और हल् का लोप होता है ।

यहाँ पर भी क्यङ्. प्रत्ययविधि और हल् लोपविधि दोनों साथ-२ कही गई हैं, तथापि क्यङ्.विधि सभी भृशादियों से यानी भृश्, सुमनस् आदि गणपठित सभी शब्दों से होगी, पर हल् लोप का सम्बन्ध उन्हीं सुमनस आदि हलन्त शब्दों के साथ होगा, जिनमें हल् है, सभी के साथ नहीं ।

इस अन्वाचयशिष्ट सम्बन्ध को यदि लेखक ने जाना होता, तो सम्भव है वे ऐसा तात्पर्य न निकालते, कि पत्नी सहित गृहस्थ ही मात्र यज्ञ कराने का अधिकारी है । अन्वाचयशिष्ट के परिप्रेक्ष्य में मन्त्र का अर्थ होगा -

ये = जो, देवानाम् = देवों में (निर्धारणे षष्ठी), ऋत्विजः = संन्यासी, ब्रह्मा आदि (समय-२ में प्राप्त

होने वाले संन्यासी जन, संस्का० वि०पृ० ३२९॥) च= और ये = जो, यज्ञिया: = यज्ञ सम्पादन करने वाले पूज्य होता आदि ऋत्विक् एवं वेद मन्त्र हैं, जिनके द्वारा, व जिनके लिये हव्यम् = हवि देने योग्य, भागधेयम् = भाग सामग्री, क्रियते = की जाती है, बनाई जाती है वे तथा यावन्तः= जितने, तविषा:= महान् (तविष: इति महन्नाम, निघ० ३/३), देवा: = यजमान आहुति देने वाले (देवोदानाद्वा, निरु० ७/४/१५, देवा:यज्ञिया: श०प्र० १/५/२/३) सह पत्नीभि: = पत्नियों के साथ, इमं, यज्ञम्= इस यज्ञ में, एत्य= आकर, मादयन्ताम् = प्रसन्न करें ।

तात्पर्य हुआ विद्वानों में जो ऋत्विज् हैं, वेदपाठ आदि करने वाले जन है, जिन्हें दक्षिणा आदि द्रव्य दिया जाता है अथवा जो द्रव्य तैयार करते हैं, वे आवें, और अन्य जो आहुति देने वाले हैं, वे अपनी पत्नियों के साथ यज्ञ में आवें । **सह पत्नीभिः** का '**सम्बन्ध**' **तविषाः देवाः** '**शब्दों के साथ होगा, सबके साथ नहीं**। यानी **आहुति देने वाले सपत्नीक होने चाहियें**, जैसा कि कर्काचार्य लिखते हैं -

येनैकस्मिन् कर्मणि पत्नी साध्याः पदार्था दृश्यन्ते यजमान साध्याश्च।--------तस्मात् सहाधिक्रियते।

कात्या० श्रौ० सूत्र १/१/२॥

अर्थात् जिस कारण से एक कर्म में पत्नी साध्य एवं यजमान साध्य पदार्थ देखे जाते हैं, अत: दोनों का समान अधिकार है।

इस प्रकार मन्त्र से यही अर्थ निकलता है कि सपत्नीक यजमान होने चाहिये, न कि यह कि ऋत्विक् भी सपत्नीक होवे।

लेखक ने ऋत्विक् गृहस्थी ही होवें, अन्य कोई नहीं। अपने इस कथन के पोषण में 'अनधिकारी पात्र' उपशीर्षक से अन्य हेतु भी दिये हैं, उनमें प्रथम है -

प्रश्न.१. पापी - ब्राह्मणजना यज्ञियो न पाप: पुरूषो याज्य: ।

ऐ०ब्रा० १९/३/५॥

अर्थात् यजमान अनाधिकारी पापी पुरूष से यज्ञ न करायें ।

उत्तर- लेखक प्रदत्त प्रमाण मनमाना व भ्रष्ट है तथा उसका जो अर्थ किया है वह भी प्रकरण के नितान्त विपरीत है। ब्राह्मण के इस स्थल पर तो यह निर्देश है कि **ऋत्विक् को पापी यजमान का यज्ञ नहीं कराना चाहिये**। जैसा कि भाष्यकार सायण लिखते हैं -

पाप पुरूषो द्वादशाहेन ऋत्विग्भि न याज्य: तस्य कर्मणि आर्त्विज्यं न कार्यमिति।

ऐ०ब्रा० १९/३/५॥

अर्थात् ऋत्विजों द्वारा द्वादशाह यज्ञ से पापी पुरुष का यज्ञ नहीं करवाया जाना चाहिये, उसके कर्म में ऋत्विक् कर्म नहीं करना चाहिये।

ब्राह्मण के इस वचन में यजमान को पापी बताया है, न कि ऋत्विजों को पापी कहा गया है । अत: लेखक का '**गृहस्थी के ऋत्विक् अधिकार**' में यह वचन अनुपयुक्त है ।

प्रश्न.२. यज्ञोपवीती एव अ:धीयीत यजेत याजेत वा यज्ञस्य प्रसृत्यौ ऐ०ब्रा०

अर्थात् यज्ञोपवीती ही अध्ययन करें, यज्ञ करें और यज्ञ करायें तथा यज्ञ का विस्तार वृद्धि करें। संन्यासी यज्ञोपवीति नहीं है अत: वह भी अनाधिकारी अपात्र है ।

उत्तर. तैत्तिरीय आरण्यक का उद्धृत यह पाठ भी अशुद्ध है, पाठ इस प्रकार है -

ब्राह्मणो यज्ञोपवीत्यधीते यजत एव तत् इति ।

तस्माद्यज्ञोपवीत्येव अधीयीत याजयेत् यजेत् वा यज्ञस्य प्रसृत्यै।

तैत्ति०आ० २/१/१ ॥

इस वचन में यज्ञोपवीत का महत्व बताया गया है, और निर्दिष्ट किया है, कि यज्ञोपवीती ब्राह्मण जो कुछ भी पढ़ता है, वह यज्ञ के समान है। इस लिए यज्ञोपवीती ही अध्ययन करें, यज्ञ की वृद्धि के लिए यज्ञ करावे और करे।

यहाँ पर यज्ञोपवीत की महत्ता से ही तात्पर्य है। संन्यासी आदि के यज्ञाधिकार या अनधिकार का निर्देश नहीं है।

वेद में वानप्रस्थी, संन्यासी आदि के ऋत्विक् कर्म विषयक सङ्केत प्राप्त होते हैं । ऋग्वेद के १०वें मण्डल का ९८वां सूक्त वर्षेष्टि सूक्त से जाना जाता है । उस सूक्त में देवापि तथा शन्तनु शब्द पठित हैं, जो विद्युत तथा जल के वाचक हैं । इस वृष्टि ज्ञान को समझाने के लिए ९८वें सूक्त के मन्त्र उद्धृत करते हुए निरुक्त में यास्क ने रूपक बांधा है । रूपक के शब्द हैं -

देवापिश्चार्ष्टिषेण कौरव्यौ भ्रातरौ बभूवतुः । स शन्तनुः कनीयान् अभिषेचयाञ्चक्रे, देवापिस्तपः प्रतिपेदे । ततः शन्तनुः राज्ये द्वादशवर्षाणि देवो न ववर्ष । ------- स शन्तनुर्देवापि शिशिक्ष राज्येन । तमुवाच देवापिः पुरोहितस्तेऽसानि, याजयानि च त्वेति तस्येतत् वर्षकाम सूक्तम् ॥

निरु० २/२/११ ॥

अर्थात् कौरव्य ऋष्टिषेण के दो पुत्र देवापि और शन्तनु भाई थे । वह छोटा शन्तनु राजगद्दी पर बैठ गया, देवापि तपस्या करने लगा । अनन्तर शन्तनु के राज्य में १२ वर्ष से वृष्टि नहीं हुई, शन्तनु ने देवापि से राज्य सँभालने के लिए प्रार्थना की । देवापि ने उससे कहा - मैं तुम्हारा पुरोहित होता हूँ और तुम्हारा यज्ञ कराऊँगा यह उस देवापि का वर्षकाम सूक्त है ।

इस रूपक का तात्पर्य है कि वर्षा से पूर्व गतिशील मरुतों का पुत्र कर्मशील देवापि = विद्युत् शान्त रहती है, यानी तपस्वी, वानप्रस्थी संन्यासी, ब्रह्मचारीरूप होती हुई शान्त रहती है, यही उसका तप करना है, और इधर उसके भाई शन्तनु = जल का अन्तरिक्ष में साम्राज्य रहता है । जब वह तपस्वीरूप देवापि विद्युत् पुरोहित बनकर कड़कती है, तब वर्षा करती है । इस रुपक का मन्त्र है -

यद्देवापिः शन्तनवे पुरोहितोहोत्राय वृतः कृपयन् नदीधेत्। ऋ० १०/९८/७।

अर्थात् यत् = जब होत्राय = वृष्टि यज्ञ के लिए, वृतः = वरण किया हुआ सत्सङ्गी, तपस्वी, देवापिः = देवों के साहचर्य से देवापि विद्युत्, शन्तनवे = जल के लिए, संसार के कल्याण के लिए इच्छा करता हुआ, पुरोहितः = पुरोहित हुआ है, और अपनी कृपयन् = कृपा दृष्टि से, अदीधेत् = यज्ञ को पूर्ण किया, तब वर्षा हुई ।

इस वृष्टि यज्ञ के प्रसङ्ग की योजना के लिए स्कन्द स्वामी लिखते हैं -

एवम् आख्यान स्वरूपाणां मन्त्राणां यजमाने नित्येषु च पदार्थेषु योजना कर्त्तव्या, एष शास्त्रे सिद्धान्तः।

निरु०१०/९८/७ ॥

अर्थात् इस प्रकार के आख्यान स्वरूप वाले मन्त्रों का यजमान=यज्ञ, कर्मकाण्ड में तथा नित्य पदार्थों में योजना कर लेनी चाहिए, यही निरुक्त शास्त्र में सिद्धान्त है।

स्कन्द के वचन के अनुसार जब यजमान = यज्ञ पक्ष में मन्त्र की योजना होगी, तब देवापि पुरोहित संन्यासी, वानप्रस्थी, ब्रह्मचारी होगें क्योंकि ये तीनों ही तप करते हैं और शन्तनु सबका कल्याण चाहने वाला यजमान होगा। तात्पर्य हुआ पुरोहित्त होने के योग्य वे तपस्वी जन हैं जो नगर से बाहर आश्रमों में अरण्यों में रहते हैं, यह इस वर्षेष्टि सूक्त से द्योतित हो रहा है ।

इस प्रकार संन्यासी आदि का ऋत्विक् कर्म में अधिकार नहीं है, यह कथन सैद्धान्तिक नहीं हो सकता, अपितु ऋत्विक् कर्म के लिए इन्हें ही अधिकृत समझना चाहिए।.

प्रश्न-३. संन्यासी को 'ब्रह्मा' पद नहीं दिया जा सकता, क्योंकि उसे भी यज्ञ में आहुति देने का विधान है। गोपथ में आदेश है -

यस्य चैव विद्वान् ब्रह्मा दक्षिणत उदङ्मुख आसीनो यज्ञ आहुति - जूहोतीति ब्राह्मण॥

गो०ब्रा०

अर्थात् जो विद्वान् ब्रह्मा दक्षिण दिशा में उससे विपरीत उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठके यज्ञ में आहुति प्रदान करे, जब संन्यासी यज्ञोपवीत त्याग चुका है, तब आहुति कैसे देगा, अतः संन्यासी भी यज्ञ कराने का

अधिकारी नहीं है ।

उत्तर - लेखक द्वारा गोपथ का उद्धृत पाठ अशुद्ध है तथा उसका अर्थ भी वचन के विरुद्ध है । ब्राह्मण का पाठ है-

यस्य चैवं विद्वान् ब्रह्मा दक्षिणत उदङ्मुख आसीनो यज्ञ आज्याहुती - र्जुहोतीति ब्राह्मणम्॥

गो०ब्रा० १/१/१५॥

वचन का अर्थ है - जिसका ऐसा जानने वाला ब्रह्मा दाहिनी ओर को, उत्तर में बैठा हुआ यज्ञ में घी की आहुतियाँ देता है, वह ब्राह्मण वचन है ।

तात्पर्य हुआ ब्रह्मा का दक्षिण में बैठना यज्ञ में घी से आहुति देने के सदृश है । ब्राह्मण वचन के इस यथार्थ को पूर्व प्रकरण से भलीं भाँति जाना जा सकता है । पूर्व प्रकरण है -

यज्ञविशिष्टानन्दानि इति उपशमयेरन् यज्ञे प्रायिश्चित्तिः क्रियते---------न च यज्ञविष्कन्ध-मुपयाति उपहन्ति पुनर्मृत्युम्---- यश्चैवं विद्वान ब्रह्मा भवति॥

गो०ब्रा०१/१/१५ ॥

अर्थात् यज्ञ में जो दोष हो जाते हैं, उनको हटावें, इसीलिए यज्ञ में प्रायश्चित्ति = पाप दूर करने के लिए, तप आदि कर्म किये जाते हैं। ऐसा करने से यज्ञ के पतन को नहीं प्राप्त करता । ऐसा करने वाला मृत्यु को हटा देता है, ऐसा जानने वाला ही 'ब्रह्मा' होता है ।

गोपथ की इस १५वीं कण्डिका में यज्ञ की सफलता का लाभ क्या होता है, इसे बताया गया है । उस लाभ को पहुँचाने वाला दक्षिण दिशा में बैठा हुआ ब्रह्मा होता है, उसका दक्षिण दिशा में बैठना घृताहुति के सदृश है । इस स्थल का यही निष्कर्ष है ।

लेखक ने गोपथ के इस वचन को उद्धृत कर यह जो तात्पर्य निकाला कि संन्यासी यज्ञ में आहुति नहीं देता, अत: वह ऋत्विक् कर्म का अनधिकारी है । लेखक की यह तात्पर्य सर्वथा अमान्य है, वचन के विपरीत है । यह सर्वविदित है कि यज्ञ में घृताहुति यजमान देता है ब्रह्मा नहीं । इस स्थिति में लेखक के अनुसार संन्यासी ही क्या, कोई भी ब्रह्मा नहीं बन पाएगा, क्योंकि ब्रह्मा को तो घृताहुति देनी नहीं है यजमानों को ही देनी है । इस प्रकार लेखक का यह अनधिकार का हेतु प्रमाण योग्य नहीं कहा जा सकता ।

ब्रह्मा का जो कार्य है उसका निर्देश मन्त्र में किया है-

ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यांम् ॥

ऋ. १०/७१/११ ॥

अर्थात् ब्रह्मा यज्ञ में किसी त्रुटि के होने पर त्रुटिज्ञापक विद्या-वाणी को बोलता है ।

यास्क ने भी इस मन्त्र की व्याख्या में लिखा है -

ब्रह्मा = सर्वविद्यः एको जाते जाते विद्यां वदति॥

निरु. १/३/७ ॥

तात्पर्य हुआ यज्ञ की अनुष्ठान विधि आदि में स्खलन को बताने वाला ब्रह्मा होता है । वह त्रुटि बताने वाला ब्रह्मचारी, संन्यासी कोई भी हो सकता है । इस प्रकार गोपथ के उपर्युक्त वचन से संन्यासी ऋत्विक् कर्म का अनधिकारी है, ब्रह्मा बनने के अयोग्य है, यह सिद्ध नहीं होता ।

ऋत्विक् कर्म का विभाजन किस प्रकार किया जावे? ऋत्विक् कर्म के अधिकारी कौन है ? इसे बताने वाला मन्त्र है -

ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान्गायत्रं त्वो गायति शक्करीषु।

ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रा विमिमीत उ त्वः॥

ऋ. १०/७१/११ ॥

अर्थात् त्वः= एक होता (होता निरु. १/३/७) ऋचाम्= ऋचाओं की पोषं - पुपुष्वान् = पुष्टि को करता हुआ, विनियोग करता हुआ, आस्ते = बैठता है, त्वः एक (उद्गाता निरु. १/७/३) शक्करीषु = ऋचाओं में (शक्कर्य ऋचः निरु. १/३/७) गायत्रम् = सामगान को (गायत्रं गायतेः स्तुतिकर्मणः, निरु. १/३/७) गायति =

गाता है और त्व, = एक, ब्रह्मा = ब्रह्मा, जातविद्याम् = उत्पन्न हुए के विषय को = त्रुटि को, वदति = बोलता है, उ=और, त्वः = एक चौथा अध्वर्यु – (अध्वर्यु, निरु. १/३/७) यज्ञस्य = यज्ञ की मात्राम् = सम्पूर्ण इति कर्तव्यता को, विमिमीते = करता है अर्थात् आहुति डालना, जल प्रक्षेपण आदि जितना भी कर्म है, उसे अध्वर्यु करता है।

मन्त्र से ज्ञात हुआ कि मन्त्रों का विनियोग होता करता है, उद्गाता सामगान गाता है, ब्रह्मा यज्ञ में हुई त्रुटियों को निर्दिष्ट करता है और अध्वर्यु यज्ञ की सम्पूर्ण क्रियाओं को करता है। मन्त्र में इन कर्मों को करने वाला सपत्नीक ही हो तथा पुरूष ही हो, इस प्रकार का बन्धन नहीं रखा है। जो भी स्त्री–पुरुष विद्वान् हो, किसी भी आश्रम के हो, वे सभी ऋत्विक् कर्म के अधिकारी हैं। ऋत्विक् कर्म के अधिकारानधिकार विषय के अधिक विस्तार के लिए लेखक मेरी लिखित उपग्रन्थ का उत्तर ग्रन्थ पुस्तिका देखें।

मेरी समझ में तो अशुद्ध शब्दों का प्रयोक्ता पापभाक् बनता है। व्याकरणाध्ययन के प्रयोजनों में महाभाष्यकार ने कहा है –

दुष्टः शब्दः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह।

स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेन्द्र शत्रुः स्वरतोऽपराधात् ॥

महाभा. पश्पशा.पृ. १९ ॥

अर्थात् उदात्तादि स्वरों से, अच्–हल् वर्णों से दूषित शब्द तथा गलत प्रयुक्त शब्द यथोचित अर्थ को नहीं कहता है, वह दूषित शब्द वाग्रूपी वज्र होकर यजमान को नष्ट करता है, जैसे 'इन्द्रशत्रु' पद के स्वर दोष से यानी षष्ठी समास निमित्तक अन्तोदात्त स्वर के स्थान पर, बहुव्रीहि निमित्तक आद्युदात्र स्वरोच्चारण से ऋत्वितों द्वारा इन्द्र का हनन कर दिया गया।

भाष्यकार के वचन से स्पष्ट है कि ऋत्विक् कर्म के अधिकारी शुद्ध, यथार्थ प्रयोग करने वाले होते हैं और अनधिकारी अशुद्ध उच्चारण करने वाले होते हैं।

बहुत से पुरोहित अशुद्ध मन्त्रपाठ करते हुये पाये जाते हैं – विश्वानि को विस्वानि, यद् भद्रम् को यदभद्रम आदि बहुत्र अशुद्धोच्चारण करते हैं और अशुद्ध ही लिखते लिखाते हैं। ऐसे पुरोहित सर्वथा ऋत्विक् कर्म के अनधिकारी हैं।

अशुद्ध उच्चारण की अनर्थकता से बचने के लिए पिता पुत्र से कहता है –

यद्यपि बहु नाधीषे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम्।

स्वकुलो श्वकुलो मा भूत् शकलः सकलो सकृच्छकृत् ॥

अर्थात् हे पुत्र अधिक न पढ़ो, तो भी व्यापकरण तो अवश्य पढ़ना चाहिए, जिससे कि अशुद्ध उच्चारण से अपना कुल श्व= कुत्ते का कुल, शकलः= टुकड़ा, सकलः= पूर्ण, सकृत् = एकबार शकृत् = विष्ठा अर्थ वाला न बन जावे।

संक्षेप में ऋत्विक् कर्म के अधिकारी जो भी स्त्री – पुरूष ब्रह्मचारी वानप्रस्थी संन्यासी, वैयाकरण हैं, विद्वान् हैं वे सभी हैं। वेदादिशास्त्रों में कहीं पर भी ऐसी अनिवार्यता नहीं हैं कि सपत्नीक गृहस्थ ही ऋत्विक् कर्म के अधिकारी हैं। लेखक की भाषा में सपत्नी गृहस्थी विद्वान् तो कभी भी अधिकारी नहीं होग, यह लेखक का दुस्साहस मात्र है। ऋत्विक् कर्म के लिए वर्ण आश्रम व लिङ्ग भेद की अपेक्षा नहीं है, अपितु कर्म दक्षता ही अपेक्षित है।

टिप्पणी

1. अग्ने पत्नीरिहा वह देवानामुशतीरूप। त्वष्टारं सोमपीतये ॥ ऋ० १/२२/९ ॥

2. प्रैषा यज्ञे निविदः स्वाहा शिष्हाः पत्नीभिर्वहते ह युक्ताः ॥ अथर्व० ५/२६/४ ॥

3. ब्राह्मण में पाठ है – न पापः पुरूषो यांज्यः द्वादशाहेन। ऐ०ब्रा० १९/३/५ ॥

लेखक द्वारा प्रदत्त 'ब्राह्मणजना यज्ञियो' पाठ तो ब्राह्मण में है ही नहीं।

पाणिनि कन्या महाविद्यालय वाराणसी–१०

ऋत्विज् (यज्ञ कराने वाले) बनने का अधिकारी केवल सपत्नी गृहस्थ विद्वान् है

आचार्य हरपाल सिंह आर्य

तीनों आश्रमी ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी तथा संन्यासी एवं पत्नी रहित गृहस्थ यज्ञ कराने के अधिकारी नहीं है।

आइये इस तथ्य पर विचार करें। क्योंकि मनुष्य मुख्यत: आर्य वही है जो विचार कर कार्य करता है। वेद मन्त्र अथ. १९-५८-६ इस तथ्य की पुष्टि करता है।

ये देवानामृत्विजो ये च यज्ञिया येभ्यो हव्यं क्रियते भागधेयम्। इमं यज्ञ सह पत्नीभिरेत्य यावन्तो देवास्तविषा मादयन्ताम्॥ अथ. १९-५८-६॥

अर्थात् (इमम्) इस (यज्ञम्) यज्ञ में (यावन्तः) जितने (तविषा) बड़े विद्वान् (ये) जो (देवानाम्) विद्वानों में सब (ऋतुओं) में यज्ञ कराने वाले (च) और (ये) जो (यज्ञियाः) पूजा=सत्कार के योग्य हैं और (ऐभ्यः) जिनके लिए (हव्यम्) देने योग्य (भागधेयम्) भाग (क्रियते) करते हैं (सहपत्नीभिः) पत्नियों के साथ (एत्य) यहाँ घर में आकर (मादयन्ताम्) हमें प्रसन्न करें। अत: यज्ञ कराने वाले ऋत्विज् सपत्नी गृहस्थ विद्वान् ही अधिकारी हैं। यही बात महर्षि दयानन्द ने पुरोहित (ऋत्विज्) के लिए संस्कार विधि के जातकर्म संस्कार में दी है।

धर्मात्मा, शास्त्रोक्त विधि का पूर्ण रीति से जानने हारा, विद्वान् सद्धर्मी, कुलीन, निर्व्यसनी, सुशील, वेदप्रिय, पूजनीय, सर्वोपकारी, गृहस्थ की पुरोहित संज्ञा है। और सामान्य प्रकरण में उसके गुण भी लिखे हैं। अच्छे विद्वान्, धार्मिक, जितेन्द्रिय, कर्म करने में कुशल, निर्लोभ, परोपकारी, दुर्व्यसनों से रहित, कुलीन, सुशील, वैदिक मत वाले, वेदवित्, एक, दो, तीन अथवा चार का वरण करें।

इस प्रकार ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ, संन्यासी तथा पत्नी रहित गृहस्थ विद्वान् भी अनधिकारी हैं अनधिकारी के द्वारा कराया गया यज्ञ विधिहीन हो जायेगा या शास्त्र विहीन होगा। उसका इष्ट फल प्राप्त नहीं होगा।

एषः तमः प्रविशत्येतं वा तमः प्रविशति यदयज्ञियान् यज्ञेन प्रसजति॥ शत.ब्रा.५-३-२-२॥

अर्थात् (एषः) यह (तमः) अन्धकार में (प्रविशति) प्रवेश करता है (वा) या (एव) इसमें (तमः) अन्धकार (प्रविशति) प्रवेश करता है (यद्) जो (अयज्ञियान्) यज्ञ के अनाधिकारी को (यज्ञेन) यज्ञ से (प्रसजति) संयुक्त करता है।

ये ते शतं वरुण ये सहस्रंरु यज्ञियाः पाशाः वितता महान्तः।

अर्थात् (ये) जो (महान्तः) महान् (यज्ञियाः) यज्ञ संबंधी (शतं) सैकड़ों (सहस्र) हजारों (पाशः) बन्धन= रुकावटें (वितता) फैली हुई हैं, (ते वरुणः) हे वरणीय प्रभो, तू (तेभिः) उनको (सविताः) सकल जगत् का उत्पादक (विष्णुः) सर्वव्यापक परमात्मा (उत) और (मरुतः स्वर्काः) पूजनीय विद्वान् लोग (नः) हमसे (अद्य) आज (मुंचन्तु) छुडावें। इस मंत्र में यज्ञ के पाशों से मुक्ति की प्रार्थना है इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि हमारे ही दोषों से वे यज्ञ के पाश हमें दुःख देते हैं। और यज्ञ द्वारा उनसे छुटा भी जाता है। इन दोषों में से अनेक दोषों का कारण अनधिकारी तथा अपात्र हैं, इसलिए उनको अधिकार से वंचित किया गया है।

मंत्र है - **अपामार्थं यतीनां ब्रह्मा भवति सारथिः॥१-१५८-६॥**

अर्थात् (सारथिः) रथ हांकने वाले के समान (अपाम्) विद्या, विज्ञान और योग शास्त्र में व्याप्त (यतीनाम्) संन्यासियों के (अर्थम्) प्रयोजन के लिए (ब्रह्म) सकल वेद विद्या को जानने वाला (भवति) होता है। यति वही है जो योग मार्ग पर चले और औरों को चलाये। उपासना काण्ड के साधक यति यत्नशीलों का एवं संन्यासियों का श्रेष्ठ प्रदर्शक है वही यतियों का ब्रह्मा होता है, वही सारथी है अर्थात् वही ईश्वर है।

अत: उक्त तथ्यों से सुस्पष्ट है यज्ञ कराने का अधिकार केवल पत्नी सहित गृहस्थ विद्वान् को है। शेष सभी अपात्र हैं। अत: अपात्र=अनधिकारी के द्वारा सम्पन्न यज्ञ खंडित होता है जो नष्ट हो जाता है। उससे इष्ट की प्राप्ति नहीं होती है।

वैदिक पुरोहित, फूल निवास, स्वतंत्र नगरी, सहारनपुर

साहित्य समीक्षा

महर्षि दयानन्द वर्णित शिक्षा पद्धति- लेखक डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रकाशक: वैदिक अनुसंधान सदन, डी. १२ सै. ८, रोहिणी, दिल्ली। मूल्य १५०/- रु.

ऋषि दयानन्द के बहुआयामी व्यक्तित्व तथा कृतित्व के विभिन्न पहलुओं पर अनेक महत्त्वपूर्ण शोध ग्रन्थ लिखे गये हैं, छपे भी हैं। महर्षि एक आदर्श शिक्षा शास्त्री थे और उन्होंने प्राचीन शिक्षा पद्धति की सामयिक महत्ता को उजागर किया है। यों तो दयानन्द तथा आर्यसमाज की भारतीय शिक्षा को देन को लेकर कुछ ग्रन्थ छपे हैं किन्तु आलोच्य ग्रन्थ की कुछ अपनी विशेषताएं हैं। इसमें महर्षि के समग्र शिक्षा-दर्शन को उनके द्वारा रचित ग्रन्थों के साथ-साथ उनके भाषणों, पत्र एवं विज्ञापनों तथा वेद भाष्य के कतिपय प्रकरणों के साक्ष्य में विवेचित किया है। ग्यारह अध्यायों में समाप्त इस विशद समीक्षात्मक ग्रन्थ में प्रारम्भ में भारतीय शिक्षा का ब्रिटिश काल में हुई अधोगति को ऐतिहासिक प्रमाणों से पुष्ट करते हुए लेखक ने स्पष्ट किया है कि विदेशी शिक्षा के बदले पुरातन आर्ष शिक्षा को सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक रूप से आदर्श के रूप में प्रस्तुत कर स्वामी जी ने देश की सर्वांगीण उन्नति की एक रूपरेखा प्रस्तुत की है। शिक्षा से जुड़े हुए अनेक पहलू इस ग्रन्थ में प्रमाण पुरस्सर विवेचित हुए हैं। यथा- अनिवार्य शिक्षा तथा शासन पर शिक्षा का दायित्व, नारी और शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार, गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का महत्त्व तथा उसकी प्रासंगिकता, माता-पिता-गुरु-छात्र के अन्योन्याश्रित कर्त्तव्य, पठन-पाठन प्रणाली में ग्राह्य और निषिद्ध ग्रन्थों का उल्लेख, शिक्षा और ब्रह्मचर्य, व्यावसयिक और तकनीकी शिक्षा आदि।

ध्यातव्य है कि ऋषि दयानन्द केवल सैद्धान्तिक शिक्षा के ही पोषक नहीं थे किन्तु जीवन यापन के लिए आवश्यक शिल्प, विज्ञान, कला कौशल तथा ग्रामोद्योग को बढ़ावा देने के लिए वे क्या कुछ करना चाहते थे उसका पता ऋषि द्वारा जर्मनी के शिक्षा शास्त्री वाइज से किये गये पत्र व्यवहार से चलता है। शिक्षा का सम्बन्ध केवल ब्रह्मचर्य काल से ही नहीं है। जीवन की सभी भूमिकाओं में शिक्षा मानव से जुड़ी रहती है। इस दृष्टि से लेखक ने समावर्तन तथा विवाह जैसे संस्कारों की शिक्षा में उपयोगिता को भी रेखांकित किया तो लेखक के श्रम की इस दृष्टि से सराहना करनी चाहिए कि उसने अपने विवेचनीय विषय (शिक्षा) से जुड़े महर्षि के समग्र वाङ्मय में यत्र तत्र बिखरे समस्त सूत्रों को एक चतुर मालाकार की भांति एक ही माला में पिरोकर अध्ययशील व्यक्तियों के लिए सुलभ कर दिया है। प्राय: देखा जाता है दयानन्दीय सिद्धान्तों को विमर्श करते समय हम महर्षि के कतिपय प्रधान ग्रन्थों पर ही निर्भर रहते हैं जबकि उनके अल्पकाय ग्रन्थों, पत्र-विज्ञापन तथा उपदेश मंजरी जैसे व्याख्यानों की उपेक्षा कर जाते हैं। डॉ. सुरेन्द्र ने इस ग्रन्थ को लिखकर दयानन्द को एक महान् शिक्षा शास्त्री तथा राष्ट्रीय शिक्षा के पुरोधा के रूप में चित्रित करने का जो स्मरणीय प्रयास किया है, वह सर्वथा अभिनन्दनीय है। छपाई , गैटअप आदि की दृष्टि से भी ग्रन्थ का मुद्रण सराहनीय है। मूल्य भी अधिक नहीं है।

डॉ. भवानीलाल भारतीय

सांसद रासासिंह आर्यसमाज अजमेर के प्रधान निर्वाचित

अजमेर संसदीय क्षेत्र से पांचवी बार लोकसभा के लिए निर्वाचित होने वाले तथा डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं से जुड़े हुए सांसद प्रो. रासासिंह विगत १० अप्रैल २००५ को सर्वसम्मतिं से अन्तरंग सभा द्वारा आर्यसमाज अजमेर के प्रधान निर्वाचित किये गये। इससे पूर्व प्रो. रासासिंह आर्यसमाज़ अजमेर के वरिष्ठ उपप्रधान थे। आर्यसमाज अजमेर के प्रधान श्री दत्तात्रेय आर्य का ९५ वर्ष की आयु में निधन हो जाने पर यह स्थान रिक्त हुआ था।

शून्य का आविष्कार कब और कैसे?

लालचन्द आर्य

वेदों का पढ़ना-पढ़ाना छूट जाने के कारण, इन में कहे ज्ञान विज्ञान को यथार्थ न जान कर संसार में भ्रम की स्थिति बनी हुई है। ऐसा ही भ्रमित करने वाला एक लेख दैनिक भास्कर पत्र (अंक ३२० वर्ष ८ महानगर ६ नवम्बर २००४) में जयपुर से प्रकाशित हुआ है। जिसका विषय, ऐसा क्यों होता है? ''शून्य की खोज का महत्त्व''

इस लेख में लेखक का मानना है कि 'भारत में लोगों ने संख्याओं को लिखने का एक उचित तरीका विकसित कर लिया था, किन्तु उस समय शून्य (०) का आविष्कार नहीं हुआ था।'

इस में आपत्ति यह है कि अथर्ववेद में तो शून्य और अन्य संख्याओं का आविष्कार एक साथ ही आदि सृष्टि में हुआ है।

वेद का प्रमाण देखें-

न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते॥
न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते॥
नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते।
तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव॥
अथर्व. का. १३/अनु. ४/म. १६,१७,१८,२०

ऋषि दयानन्द जी ने इन मन्त्रों का अर्थ इस प्रकार किया है कि परमेश्वर एक ही है, उससे भिन्न कोई न दूसरा न तीसरा न कोई चौथा परमेश्वर है। न पाचवां, न छठा, और न कोई सातवां ईश्वर है। न आठवां, न नवमा, और न कोई दशमा ईश्वर है। किन्तु वह सदा एक अद्वितीय ही है। उससे भिन्न दूसरा ईश्वर कोई भी नहीं।

इन मन्त्रों में जो दो से लेके दश पर्य्यन्त अन्य ईश्वर होने का निषेध किया है, सो इस अभिप्राय से है कि सब संख्या का मूल एक (१) अंक ही है। इसी को दो, तीन, चार, पांच, छः, सात, आठ और नव बार गणने से २/३/४/५/६/७/८/ और ९ नव अंक बनते हैं और एक पर शून्य देने से १० का अंक होता है। उन से एक ईश्वर का निश्चय कराके वेदों में दूसरे ईश्वर के होने का सर्वथा निषेध ही लिखा है, अर्थात् उसके एकपने में भी भेद न हों, और वह शून्य भी नहीं। दूसरे अर्थ में गणित विद्या का आविष्कार भी इन्हीं मन्त्रों से हुआ है।

वेद के ये मन्त्र दर्शा रहे हैं कि शून्य (०) के अंक का आविष्कार अन्य अंकों के साथ ही, सृष्टि के आदि में परमेश्वर द्वारा मनुष्यों के व्यवहार हेतु किया गया था, बाद में नहीं। इन मन्त्रों से परमेश्वर की सर्वव्यापकता और सूक्ष्मता भी सिद्ध होती है। जैसे एक का अंक सब संख्याओं के भीतर व्याप्त है, किन्तु एक के बीच में कोई अंक नहीं समा सकता, ऐसे ही परमेश्वर सब पदार्थों में व्यापक है, परन्तु उस में अन्य कोई पदार्थ प्रविष्ट नहीं हो सकता, क्योंकि वह अतिसूक्ष्म और सब की आत्मा है उसकी आत्मा कोई नहीं, वह स्वयं ही अपनी आत्मा का भी आत्मा है।

शून्य की उत्पत्ति- नौ के अंक में एक जोड़ने से शून्य की उत्पत्ति होती है। जब हम एक से लेकर आठ तक के अंकों में एक-एक जोड़ते जाते हैं तो नव तक की संख्या में बनती जाती है, किन्तु जब नौ में एक जोड़ा जाता है तो १ का अंक शून्य (०) में परिवर्तित हो जाता है, परन्तु उस शून्य का मूल्य ९ नौ ही रहता है। और एक का अंक नौ में प्रविष्ट नहीं हो पाता, क्योंकि नौ का अंक अन्य अंकों की अपेक्षा पूर्ण है इसलिये एक को ग्रहण नहीं करता तब उसे 'हाथ लगा' कहकर शून्य के आगे (१०) लिखा जाता है, तब दश (१०) की संख्या बनती है। इस प्रकार नौ की संख्या के उपरान्त ही शून्य (०) की उत्पत्ति होती है। एक के अंक से पहले (०) शून्य की कल्पना करना एक भ्रान्ति है यह तो नौ में एक जुड़ने

से बनती है।

शून्य और नव अंक की समानता- शून्य और नव अंक में स्वरूप भेद के बिना अन्य कुछ भी अन्तर नहीं, यह दोनों परस्पर समान ही हैं। यह स्थिर सिद्धान्त इस नियम से प्रकट हो रहा है कि यदि किसी भी अंक के आगे शून्य लगाने या हटाने से नव ही आते अथवा जाते हैं। जैसे एक पर शून्य लगाने से दश हो जाता है और एक पर शून्य हटाने से नौ जाते और एक रह जाता है। सार यह है कि जिस भी संख्या के साथ शून्य लगाया या हटाया जायेगा उसे नौ गुणा ही बढ़ा या घटा देगा। जैसे ३६ पर शून्य लगाने से ३६० की संख्या बनी जो ३६ से नौ गुण और बढ़ गई (३६×९=३२४+३६=३६०) तथा ३६० पर से शून्य हटाने पर भी ३६ के नौ गुणा (३६×९=३२४) घट कर ३६ ही रह गये। ऐसे अनेक परीक्षण करके देखा जा सकता है शून्य को अकेला लिखने पर तो उस का मूल्य शून्य ही है, किन्तु किसी संख्या के साथ लगने पर नौ गुणा है अर्थात् नौ के समान है।

नौ के अंक का पूर्ण होने का एक यह भी प्रमाण है कि जिस प्रकार अन्य अंकों को परस्पर गुणा करने से न्यूनाधिक लाभ होता है, नव को गुण करने से समानता ही रहती है कोई भेद नहीं आता है। जैसे ९×३=२७ फल प्राप्त होने पर २+७=९ का अस्तित्व बना रहा। ऐसे ही ९×३५=४५, ४+५=९ आदि आदि। और नौ की गुणा में से ९ का अंक घटाने या बढ़ाने पर भी नौ का अस्तित्व बना ही रहता है, जैसे २७-९=१८, १+८=९ तथा ४५+९=५४, ५+४=९ बना ही रहा। ऐसा अन्य अंकों में नहीं होता।

दैनिक भास्कर के लेख के अन्त में यह भी लिखा है कि 'वास्तव में यह (०) संख्या निर्धारित नहीं है'। इस का समाधान भी ऊपर लेख में शून्य की संख्या निर्धारित करके कर दिया है।

ग्रा. मदाना खुर्द, डा. मदाना कलां,
जि. झज्जर, हरियाणा

अनूठी आकर्षक उपहार योजना

सभा द्वारा लिए गए निर्णय के अनुरूप सभी सुधी पाठकों हेतु माह फरवरी से उपहार योजना का आरम्भ किया जा रहा है। परोपकारी मासिक पत्रिका के सदस्यों की संख्या बढ़ाने वाले सुधी पाठकों एवं आर्यजनों को वार्षिक दस सदस्य बनाने पर श्री गजानन्द आर्य कृत आर्य समाज की मान्यताएं एवं दस आजीवन सदस्य बनाने पर तथा आजीवन सदस्य बनने पर स्वामी जी का अमूल्य ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश प्रोत्साहन स्वरूप उपहार के रूप में प्रदान किया जाएगा।

निवेदन है कि परोपकारी पत्रिका अपनी है जो अपने ओजस्वी लेखों के माध्यम से जनजागरण में एक सशक्त माध्यम बन रही है अतः इसका जन-जन तक पहुँचना अनिवार्य है जो आपके सहयोग के बिना असम्भव है। उपहार स्वरूप सत्यार्थ प्रकाश मंगाने पर ४०/- रु. डाक व्यय लगेगा।

अतः आप परोपकारी के पारिवारिक सदस्य एवं आर्य होने के नाते सहयोग प्रदान कर हमें अनुगृहीत करें।

आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है।

मन्त्री परोपकारिणी सभा, अजमेर।

पाखण्ड का खण्डन आवश्यक

सभी आर्य जनों एवं सुधी पाठकों से निवेदन है कि समाज को पथभ्रष्ट करने एवं वैदिक मार्ग से जनसामान्य को बहकाने के लिए एवं पाखण्ड के पोषण हेतु कुछ कुत्सित लोगों द्वारा वैदिक मान्यताओं के विरुद्ध विवादास्पद लेख खण्डन वक्तव्य वैदिक धर्म के विरुद्ध प्रकाशित करने का दुष्चक्र चलाया जा रहा है। अतः आप सभी जागरूक सज्जनों से निवेदन है कि इस प्रकार का कोई खण्डन वक्तव्य लेख या ऐसी कोई आपत्ति जनक सामग्री आपकी जानकारी या दृष्टि में आये तो कृपया सभा को सप्रमाण इसकी जानकारी भेजें। सभा का प्रयास होगा कि देश के ख्यातनाम वैदिक विद्वान जनों से आवश्यक परामर्श कर सही तथ्यों को प्रमाण सहित सामान्य जनों को अवगत कराया जा सके। आपका सहयोग प्रार्थनीय है।

सम्पर्क सूत्र-मंत्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

शुभ संकल्प

१२५वें बलिदान दिवस को सार्थक बनाने हेतु वैदिक साहित्य में प्रचार-प्रसार के दृष्टिकोण से छूट

विगत ऋषि मेले के अवसर पर १२५वें बलिदान दिवस को सार्थक बनाने हेतु लिए गए संकल्प के अनुक्रम में सभा का प्रयास है कि वैदिक साहित्य के प्रचार-प्रसार से जनजागरण हो। प्रबुद्ध पाठकों को वैदिक विचार घर बैठे प्राप्त हो इसे लक्षित कर परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा प्रकाशित निम्नांकित साहित्य २००/- रुपये से अधिक राशि की पुस्तकें क्रय करने पर सुधी पाठकों को ५० प्रतिशत निर्धारित क्रय मूल्य पर छूट दी जायेगी। इस योजना के अन्तर्गत पुस्तकें केवल भारत वर्ष में ही भेजी जा सकेंगी विदेशों में नहीं, डाक व्यय, पैकिंग खर्चा, मजदूरी, रेल किराया, ट्रान्सपोर्ट किराया, बैंक खर्चा आदि सभी व्यय पुस्तकें मंगाने वालों को देय होंगे। पुस्तकों के ऑर्डर के साथ कृपया अपना नाम, पूरा पता, पोस्ट ऑफिस, जिला व पास का रेल्वे स्टेशन का नाम रेल्वे का नाम ट्रान्सपोर्ट कम्पनी का नाम सुवाच्य एवं स्पष्ट नागरी अक्षरों में पिन कोड नम्बर सहित अवश्य लिखें। चैक स्वीकार नहीं किया जायेगा, समस्त राशि का मनीऑर्डर या बैंक ड्राफ्ट वैदिक पुस्तकालय, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर के पते पर भेजे। उपलब्ध पुस्तकें ही भेजी जायेंगी। पुस्तकें मंगाने से पूर्व कितनी राशि भेजना है कृपया इस सम्बन्ध में वैदिक पुस्तकालय से सम्पर्क कर ही राशि भेजे। यह योजना दि. १ जून २००५ से प्रभावी होगी। हमारा सभी का नैतिक दायित्व है कि देश में वैदिक विचारों के माध्यम से नवजागरण हो इसके लिए सभी सुधी पाठकों एवं दानदाताओं से निवेदन है कि इस स्वर्णिम अवसर का लाभ उठायें एवं अधिकाधिक वैदिक साहित्य क्रय कर उपहार स्वरूप अपने स्वजनों को भेंट कर उन्हें वैदिक विचारों से लाभान्वित करें।

देश को जगाना है वैदिक साहित्य पढ़ना और पढ़ाना है, यह शुभ संकल्प लें।

पुस्तकों की सूची मय मूल्य

वेद संहिताएँ (केवल मन्त्र)	मूल्य
१. ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद चारों वेद संहिताएं (मूल) का १ सैट	७५०.००
२. ऋग्वेद भाष्य १३ खण्ड का एक सैट (संस्कृत एवं हिन्दी भाष्य)	१,३८०.००
३. यजुर्वेद भाष्य ४ खण्ड का सम्पूर्ण एक सैट (संस्कृत एवं हिन्दी भाष्य)	४५०.००
४. ऋग्वेद भाषाभाष्य १२ खण्ड का एक सैट (हिन्दी भाष्य)	४५०.००
५. यजुर्वेद भाषा भाष्य २ खण्ड (सम्पूर्ण) का एक सैट (हिन्दी भाष्य)	१५०.००
६. पाखण्ड-खण्डन और शंका समाधान के १५ ग्रन्थों का एक सैट जिसमें अनुभ्रमोच्छेदन, भ्रमोच्छेदन, भ्रान्ति निवारण, शिक्षापत्री ध्वान्त निवारण, वेद विरुद्ध मत खंडन, वेदान्ति ध्वान्त निवारण व शास्त्रार्थ ग्रन्थ	७८.००
७. वेदांग प्रकाश १३ भागों का एक सैट (आख्यातिक अजिल्द सहित)	३००.००
८. अष्टाध्यायी भाष्य भाग १,२ और ३ (चौथे अध्याय तक) एक सैट	३५०.००
९. यजुर्वेद संहिता (मूल) मन्त्र वर्णानुक्रमणिका सहित सजिल्द साधारण	१००.००
१०. चतुर्वेद विषय सूची	४०.००
११. यजुर्वेद के मंत्रों की वर्णानुक्रमणिका	२.००
१२. सामवेद के मंत्रों की वर्णानुक्रमणिका	२.००
१३. ऋग्वेद के प्रथम बाईस मंत्रों का भाष्य	५.००
१४. ऋग्वेद भाषा भाष्य का नमूना	५.००
१५. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका अजिल्द	४०.००
१६. सत्यार्थ प्रकाश सजिल्द	८०.००
१७. संस्कार विधि सजिल्द	४०.००
१८. गोकरुणानिधि	३.००
१९. स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश	२.००
२०. आर्योद्देश्यरत्नमाला (हिन्दी)	२.००
२१. आर्याभिविनय बड़ा आकार अजिल्द	७.००
२२. आर्याभिविनय गुटका अजिल्द	७.००
२३. हवनमंत्रा बड़ा आकार	५.००
२४. वैदिक नित्यकर्मविधि	२५.००
२५. पंचमहायज्ञविधि	१२.००
२६. विवाह पद्धति	२०.००
२७. संस्कृत वाक्य प्रबोध	१५.००
२८. व्यवहार भानु	१२.००
२९. निरुक्तमूल (निघण्टु भाष्य)	८०.००
३०. महर्षि दयानन्द के शास्त्रार्थ सजिल्द	४०.००
३१. महर्षि दयानन्द आत्म कथा	१५.००
३२. उपदेश मंजरी (पूना प्रवचन)	२०.००

३३. आर्यसमाज की मान्यताएं २०.००
३४. मानवनिर्माण के स्वर्ण सूत्र १५.००
३५. अथर्ववेदीय-पञ्चपटलिका सजिल्द २५.००
३६. अथर्ववेदीय-पञ्चपटलिका अजिल्द १५.००
३७. वैदिक कोष: (निघण्टु मणि माला) २५.००
३८. सामवेद आध्यात्मिक मुनिभाष्य दोनों खण्ड का सम्मिलित मूल्य ४००.००
३९. दयानन्द ग्रन्थ माला प्रथम खण्ड १००.००
४०. दयानन्द ग्रन्थ माला द्वितीय खण्ड १००.००
४१. नवजागरण के पुरोधा (दयानन्द सरस्वती जीवन चरित्र) १००.००
४२. आर्य धर्मेन्द्र जीवन सजिल्द (स्वामी दयानन्दजी महाराज का जीवन चरित्र) १००.००
४३. महर्षि दयानन्द सरस्वती (जीवन एवं उनकी हिन्दी रचनाएं) २५०.००
४४. महर्षि दयानन्द निर्वाण-शती स्मृति-ग्रन्थ १००.००
४५. सामपद संहिता सजिल्द (पदपाठ) २५.००
४६. वेदार्थ विमर्श: (वेदार्थ परिजात खण्डनम्) २५.००
४७. डॉ. भवानीलाल भारतीय अभिनन्दन ग्रन्थ बढ़िया ५१.००
४८. डॉ. भवानीलाल भारतीय अभिनन्दन ग्रन्थ साधारण ३१.००
४९. ऋग्वेद महाभाष्य सजिल्द ५०.००
५०. दयानन्द दिव्य दर्शन १२.००
५१. स्वामी दयानन्द चरितम् १०.००
५२. वैदिक सन्ध्या हिन्दी पद्यानुवाद सहित ५.००
५३. मांसाहार, वैदिक धर्म एवं विज्ञान १२.००
54. Swami DayanandSaraswati (Atmakatha) 20.00
55. The Book Of Prayer(Arya Bhivinaya) 35.00
56. Kashi Debate on Idol Worship 20.00
57. A Critique of Swami Narayan Sect 20.00
58. An Examination of Vallabha Sect 20.00
59. Five Great Rituals of the Day (Panch Maha Yajna Vidhi) 20.00
60. Bhramochhedan 25.00
61. Bhranti Nivarana 35.00
62. Gokaruna Nidhi 12.00
63. Dayanand Commemoration Volume 1933 Edition 50.00

नोट- प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेताओं पर यह छूट प्राप्य नहीं होगी।

परोपकारी के सुधी पाठकों से निवेदन

परोपकारी पत्रिका आपकी अपनी पत्रिका है, समय पर इसे आपकी ओर से आर्थिक सहयोग मिलता रहे पारिवारिक सदस्य होने के नाते यह आपका नैतिक दायित्व है।

आपका सहयोग जो वांछित है।

१. परोपकारी पत्रिका का वार्षिक शुल्क निर्धारित देय अवधि में ही जमा कराएं ताकि आपको नियमित रूप से पत्रिका प्राप्त होती रहे।

२. अधिकांश सदस्यों का शुल्क ४-५ वर्षों से लम्बित है. उन्हें स्मरित कराने पर भी शुल्क अप्राप्त रहता है जिससे आर्थिक संकट उत्पन्न होने के कारण हमें पत्रिका भेजना बंद करना पड़ता है जो एक दु:खद स्थिति होती है। कृपया समयानुकूल सहयोग दें।

३. पत्रिका के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार का पत्र व्यवहार करते समय कृपया अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख अवश्य करें ताकि पत्र व्यवहार में सुविधा हो, ग्राहक संख्या का उल्लेख करने से हमें आपका पता खोजने में सुविधा होती है।

४. विगत तीन वर्षों से परोपकारी का शुल्क ६०/- रुपये निर्धारित है किन्तु कई सम्मानीय सदस्य किश्तों में उक्त शुल्क भेजते हैं जिससे हमें उक्त राशि जमा करने में असुविधा होती है, कृपया वार्षिक शुल्क एक मुश्त भेजकर हमें अनुगृहीत करें

आप सुधी एवं श्रेष्ठ पाठक हैं, अत: भविष्य में आप हमें सतत सहयोग देते रहें।

—सम्पादक

योग शिविरों में हठयोग की क्रियाओं का प्रशिक्षण उचित या अनुचित

आचार्य सत्यजित् आर्य
एम.डी. (आयुर्वेद), दर्शनाचार्य

आधुनिक जीवन शैली की मार झेल रही जनता योग शिविरों की ओर कितनी आकृष्ट हो रही है यह देखते ही बनता है। शारीरिक रोगों से ग्रस्त व मानसिक असंतुलन से त्रस्त जनता को प्राचीन उपाय आसन, प्राणायाम, ध्यान आदि आकर्षित कर रहे हैं। वे स्वस्थ रहने के लिये धन देकर औषधी खाने की अपेक्षा समय देकर आसन, प्राणायाम, ध्यान आदि करने में लाभ देख रहे हैं। पिछले कई दशकों से स्वास्थ्य के लिये चल रहे वैकल्पिक प्रयास आज पत्र-पत्रिकाओं, दूरदर्शन आदि की सहायता से तेजी से उभर कर आये हैं व हर पढ़े-लिखे व्यक्ति के मुख पर हैं। प्राचीन ग्रन्थों में वर्णित इन उपायों के लाभ देखकर अनेक संस्थाओं ने इन पर वैज्ञानिक रीति से अनुसंधान का प्रयास भी किया और इन्हें लाभप्रद भी पाया। अनुसंधानों से प्राप्त परिणामों ने इन उपायों को प्रामाणिकता प्रदान की फलतः समाज में इनकी विश्वसनीयता बढ़ी। इससे इन्हें सिखाने वाली संस्थाओं व व्यक्तियों की अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। आधुनिक युग के प्रभाव से इन्हें सीखने-सिखाने की शैली में परिवर्तन आया है। आज ऐसे योग-शिविर छोटे-बड़े स्तर पर कस्बों, नगरों, महानगरों में निरंतर हो रहे हैं।

इन योग-शिविरों में जो आसन, प्राणायाम, ध्यान आदि कराये जाते हैं वे व्यक्ति-संस्था-संप्रदाय भेद से अनेक भिन्नता रखते हुए भी लगभग समान हैं। इन आसन, प्राणायाम, ध्यान आदि क्रियाओं में से अनेक क्रियायें 'हठ-योग' की होती हैं। एक ओर महर्षि दयानन्द के अनेक स्वाध्यायशील अनुयायियों में 'हठ-योग' की स्वीकार्यता नहीं हो पाती है, क्योंकि उन्हें महर्षि दयानन्द के 'हठ-योग' विषयक वाक्यों में 'हठ-योग' को त्यागने का निर्देश दिखाई देता है, दूसरी ओर महर्षि दयानन्द के अन्य अनेक अनुयायी इसके लाभों को देखकर इसे अपना लेते हैं। महर्षि दयानन्द के प्रति आस्था रखने वाली कुछ संस्थाएँ व प्रचारक 'हठ-योग' की अनेक क्रियाओं का प्रशिक्षण देते हैं जबकि कुछ संस्थाएँ व प्रचारक इसका विरोध करते हैं।

ऐसे में यह प्रश्न उठ खड़ा होता है कि आर्यसमाज के द्वारा 'योग-प्रचार' के नाम पर या स्वास्थ्य-शिविर के नाम पर 'हठ-योग' की ये क्रियायें करवाना उचित है या अनुचित, महर्षि दयानन्द के विरुद्ध है या अनुकूल, हमें ऐसे कार्यक्रमों का विरोध करना चाहिए या सहयोग, इन क्रियाओं को करना चाहिए या नहीं?

आईये महर्षि दयानन्द के उन वाक्यों को देखें जिनमें 'हठ-योग' को त्याज्य-हानिकर कहा गया है या उसके दोष बताये गये हैं-

१. सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ३- "*अब जो परित्याग के योग्य ग्रन्थ हैं उनका परिगणन संक्षेप से किया जाता है। अर्थात् जो-जो नीचे ग्रन्थ लिखेंगे, वह-वह जाल-ग्रन्थ समझना चाहिये............ योग में हठप्रदीपिकादि................ ।*

प्रश्न- क्या इन ग्रन्थों में कुछ भी सत्य नहीं?

उत्तर- थोड़ा सत्य तो है, परन्तु इसके साथ बहुत-सा असत्य भी है।

इससे 'विषसम्पृक्तान्नवत् त्याज्याः' जैसे अत्युत्तम अन्न विष से युक्त होने से छोड़ने योग्य होता है, वैसे ये ग्रन्थ हैं।.......

प्रश्न- जो त्याज्य ग्रन्थों में सत्य है, उसका ग्रहण क्यों नहीं करते?

उत्तर- जो-जो उनमें सत्य है, सो-सो वेदादि सत्य शास्त्रों का है और मिथ्या उनके घर का है। वेदादि-सत्यशास्त्रों के स्वीकार में सब सत्य का ग्रहण हो जाता है। जो कोई इन मिथ्या ग्रन्थों से सत्य का ग्रहण करना चाहे, तो मिथ्या भी उसके गले लपट जावे। इसलिये 'असत्यमिश्रं सत्यं दूरतस्त्याज्यमिति' असत्य से युक्त

ग्रन्थस्थ सत्य को भी वैसे ही छोड़ देना चाहिये, जैसे विषयुक्त अन्न को।"

२. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका-ग्रन्थप्रामाण्याप्रामाण्यविषय- "........इन ग्रन्थों का तो पूर्वोक्त प्रकार से स्वतः परतः प्रमाण करना, सुनना और पढ़ना सबको उचित है। इससे भिन्नों का नहीं। क्योंकि जितने ग्रन्थ पक्षपाती, क्षुद्रबुद्धि, कम विद्या वाले, अधर्मात्मा, असत्यवादियों के कहे वेदार्थ से विरुद्ध और युक्ति प्रमाण रहित हैं, उनको स्वीकार करना योग्य नहीं है।

आगे उनमें से मुख्य-मुख्य मिथ्या ग्रन्थों के नाम भी लिखते हैं- जैसे ..... हठदीपिका आदि ग्रन्थ, जो कि योग शास्त्र से विरुद्ध हैं।......... ये सब वेद युक्ति प्रमाण और परीक्षा से विरुद्ध ग्रन्थ हैं। इसलिये सब मनुष्यों को उक्त अशुद्ध ग्रन्थ त्याग कर देने योग्य हैं।

कदाचित् इन ग्रन्थों के विषय में कोई ऐसा प्रश्न करे कि- इन असत्य ग्रन्थों में भी जो-जो सत्य बात हैं, उनका ग्रहण करना चाहिये? तो इसका उत्तर यह है कि- जैसे अमृत तुल्य अन्न में विष मिला हो, तो उसको छोड़ देते हैं, क्योंकि उनसे सत्य ग्रहण की आशा करने से सत्यार्थ प्रकाशक वेदादि ग्रन्थों का लोप हो जाता है। इसलिये इन सत्य ग्रन्थों के प्रचार के अर्थ उन मिथ्या ग्रन्थों को छोड़ देना अवश्य चाहिये।

अब आगे उन पूर्वलिखित अप्रमाण ग्रन्थों के संक्षेप से पृथक्-पृथक् दोष भी दिखलाये जाते हैं।........"

सूचना- आगे के प्रकरण में हठदीपिका के दोष नहीं गिनाये गये हैं।

३. पूना प्रवचन ११- 'हठ-योग' की चार क्रियाओं बस्ति, त्राटक, नेति, धौति जो कि षट्कर्म में आती हैं- का वर्णन कर लिखा है- *"यह बाजीगरी का खेल है। इनसे कब निवृत्ति पाकर योग प्राप्त कर सकते होंगे? यह हठवाले ही जानें। इन कामों से बीमारियाँ पैदा होती हैं।"*

४. पूना प्रवचन ११- *"आसन वही है कि जिसमें सुख से बैठकर ईश्वर से योग हो सके, तो फिर नये लोगों का यह कहना कि यह चौरासी आसनों वाला भानुमती का तमाशा ठीक है, कैसे मान लिया जावे। इसी तरह पर प्राणायाम के विषय में तमाशा बन रहा है। प्राणायाम की यथार्थ प्रशंसा प्रथम ही वर्णन कर चुके हैं। नासिका और मुख बांधकर प्राणों की रुकावट करने से कुम्भक होता है, तो जो लोग फांसी पर चढ़ते हैं, उन्हीं को कुम्भक का ठीक साधक समझना चाहिए। यथार्थ स्वरूप कुंभक का यह है कि वायु बाहर की बाहर रोक रखना, बाहर निकालने में विशेष उपाय करने से रेचक होता है। भीतर के भीतर प्राणों को रखने से पूरक होता है। यह प्राणायाम का विधान है।"*

उपर्युक्त उद्धरणों में 'हठप्रदीपिका' आदि 'हठ-योग' के ग्रन्थों को त्यागने का निर्देश इसलिये है कि (क) हम असत्य न पकड़ लें (ख) अन्यथा सत्यग्रन्थों का लोप होगा। यहां प्रश्न उठता है यदि कोई योग्य व्यक्ति सावधानी से सत्य-सत्य ले लेवे, वेदार्थ से विरुद्ध और युक्ति-प्रमाण रहित असत्य न लेवे तो? असत्य ग्रन्थों का प्रचार न करे और सत्यग्रन्थों का प्रचार करे तो? क्या तब इन ग्रन्थों की बातों को ग्रहण कर अन्यों को बताया जा सकता है? एक पक्ष कहेगा-नहीं, यह महर्षि की भावनाओं के विपरीत है। किन्तु यदि हम महर्षि दयानन्द के अन्य संदर्भों को भी देखें तो दृष्टि बदलेगी।

(१) सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ३ में त्याज्य ग्रन्थों में यह भी लिखा है '........वैद्यक में शार्ङ्गधरादि.....'। पुनरपि समुल्लास १० में शार्ङ्गधर संहिता की पंक्ति को प्रमाण स्वरूप उद्धृत किया **'बुद्धिं लुम्पति यद् द्रव्यं मदकारि तदुच्यते'** अर्थात् महर्षि दयानन्द के त्याज्य ग्रन्थों संबंधी निर्देश को जितनी कट्टरता से लिया जा रहा है, ऐसा महर्षि दयानन्द स्वयं भी नहीं लेते थे। महर्षि के उपर्युक्त बिन्दु १ व २ के उद्धरण जन सामान्य के लिये समझे जाने चाहिएँ, न कि विद्वान् व विवेचना में समर्थ व्यक्तियों के लिये।

(२) उद्धरण ३- पूना प्रवचन ११- के वाक्यों से अतिवादी तात्पर्य लेते हैं कि 'हठ-योग' की सभी क्रियाओं से या षट्कर्मों से रोग पैदा होते हैं। यदि महर्षि दयानन्द

का भी यही अभिप्राय होता तो वे स्वयं बस्ति, नौलि, कुंजलक्रिया, आसन आदि क्यों करते?

डॉ. प्रशान्त वेदालंकार ने अपनी पुस्तक 'आयुर्वेद के ज्ञाता महर्षि दयानन्द' के पृष्ठ ७० पर महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र भाग-१, पृ. १०२ का उद्धरण देते हुए लिखा है-

''सन् १८६४ में आगरा में एक बार स्वामी जी के पैरों पर फुंसियाँ निकल आईं। उन्होंने कहा कि उदर में कुछ विकार है। अतः चार मनुष्यों के साथ यमुना पर न्यौली क्रिया करने को चले गये। वहाँ जल में बैठकर तीन वार मल द्वार से जल खींचा (=अर्थात् बस्ती ली) और बाहर आकर नाभिचक्र को घुमाकर (=अर्थात् नौली करी) उसे बाहर निकाल दिया, और उदर शुद्ध हो गया। इससे वे कुछ निर्मल हो गये थे। डेरे पर आकर दाल भात खाया और अपने साथियों से कहा कि हमने यह क्रिया नर्मदा के किनारे एक कनफड़े योगी से सीखी थी।''

पृ. ६१ पर महर्षि दयानन्द का जीवन चरित, भाग-१, पृ. ९७ का उद्धरण देते हुए लिखा है-

''सन् १८६४-६५ में ग्वालियर में बालाप्रसाद्ध के पिता जगन्नाथ को अधिक चरस पीने से श्वास का रोग हो गया था। उसे स्वामी जी ने कुंजल क्रिया बताई थी। उससे जगन्नाथ का रोग शान्त हो गया था। स्वामी जी स्वयं भी सप्ताह में एक बार यह क्रिया करते थे।''

पृ. ३७ पर श्रीमद्दयानन्द प्रकाश पृ. २९० का उद्धरण देते हुए लिखते हैं-

''महर्षि दयानन्द सन् १८७५ में बम्बई में प्रातःकाल ही विविध आसनों द्वारा व्यायाम कर लेते थे।''

पृ. ५६ पर म.द. का जी.च. भाग २ पृ. १५५ का उद्धरण देते हुए लिखा है-

''ठाकुरदास नाम एक सज्जन दानापुर में वास करते थे उन्हें योगाभ्यास की जब लगन लगी तो उन्होंने एक निपट अनाड़ी मनुष्य से प्राणायाम सीखना आरम्भ कर दिया। विधिविहीन, उलटी पुलटी रीति से पूरक, रेचक और कुम्भक करने पर उनके प्राण प्रकुपित हो गये। नाभि-कमल निवासी अपान पवन में गांठ पड़ जाने से सदा पीड़ा रहने लगी। इससे वे बड़े दुर्बल और कृश हो गये। एक दिन उन्होंने भगवान् से आये अपने रोग भोग का वर्णन किया। महर्षि ने उनको आश्वासन देते हुए कहा- योगासन से हम आपका तीन वर्षों का रोग दो ढाई पल में दूर कर देंगे। महर्षि ने उसको एक कोठरी में ले जाकर पीठ के बल लिटा दिया और घुटने खड़े रखवाए। उसके पाँव पर अपने पाँव रखकर दबाव डाला और दूसरी ओर उनका सिर ऊपर को उठवाया, उनकी व्याधि दूर हो गयी।''

इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द का तात्पर्य वह नहीं जो अतिवादी ले रहे हैं। 'हठयोग' का विरोध करने वाले भी अपने योग-शिविरों में 'हठयोग' के आसन करवाते हैं। यदि 'हठयोग' की हर क्रिया रोगोत्पादक है तो वे 'हठ योग' के आसन क्यों करते-करवाते हैं

जो षट्कर्मों से रोगोत्पत्ति मानते हैं वे भी महर्षि दयानन्द के अभिप्राय से हटकर कुछ भिन्न अभिप्राय समझ रहे हैं। महर्षि ने जहाँ रोगोत्पत्ति की बात लिखी वहां षट्कर्मों में से मात्र चार कर्मों का उल्लेख किया, नौलि व कपालभाति या हठयोग की अन्य किसी क्रिया को नहीं लिखा। रोगोत्पत्ति की बात भी उस स्थिति में मानी जानी उचित है जब इनका प्रयोग बाजीगरी के खेल की तरह अन्यों के सामने प्रदर्शन के लिये किसी भी समय बार-बार किया जाता हो। यदि ये क्रियायें उचित रीति से करने पर भी हानिकर होतीं तो महर्षि दयानन्द इन्हें क्यों करते? अनुचित रीति से किये जाने पर रोग हों तो इसमें षट्कर्मों का क्या दोष?

महर्षि दयानन्द के पूना प्रवचन वाले अंश में शैली देखें तो ज्ञात होता है वहाँ 'हठयोग' का खंडन नहीं विधान कर रहे हैं 'हठयोग' से पूर्व प्राणायाम की उचित

रीति बताकर लिखते हैं- ''यह प्राणायाम का विधान है'' इसके तत्काल बाद वे लिखते हैं- ''अब हठ योग का विधान वर्णन किया जाता है। हठयोग में 'बस्ति' उसे कहते हैं कि गुदा मार्ग के रास्ते पानी चढ़ाकर सफाई करना।......''

हठयोग के षट्कर्मों का खंडन करने वाले लोग भी कब्ज होने पर एनिमा लेते हैं जो कि बस्ति का ही परिवर्तित रूप है। आवश्यकता होने पर कुंजल क्रिया भी करते हैं।

'हठयोग' नाम मात्र से चिढ़ बैठे अतिवादी लोग प्राणायाम के प्रसंग में आने वाले 'रेचक, पूरक, कुंभक' इन शब्दों का उपयोग तक अनुचित समझते हैं। यदि कोई संस्कार वशात् योग शिविर में श्यामपट्ट पर लिख दे तो मिटवा देते हैं, जबकि हठयोग को त्याज्य मानने वाले महर्षि दयानन्द स्वयं इन शब्दों का प्रयोग कर रहे हैं- देखें बिन्दु ४। अर्थात् महर्षि दयानन्द का हठयोग के प्रति विरोध वैसा नहीं था जैसा अतिवादी मान रहे हैं।

हठयोग की प्राणायाम विधियों का विरोध करने वाले भी महर्षि दयानन्द को ठीक नहीं समझ पाये। महर्षि ने हाथों से नासिका-मुख को बांधकर प्राणों की रुकावट का निषेध किया है, न कि प्राणायाम की पूरी की पूरी विधि का। नहीं तो वे स्वयं ''मूल-बंध'' का उल्लेख क्यों करते जो कि 'पातंजल योग' में नहीं है, 'हठयोग' में है।

अतिवादी महर्षि दयानन्द का मात्र नाम लेकर, उनका वचन उद्धृत न करते हुए कहते हैं कि प्राणायाम का प्रयोजन चिकित्सा नहीं है। जबकि महर्षि दयानन्द के वचन प्राणायाम का मुख्य लाभ नीरोगता की उन्नति बता रहे हैं-

''अब प्राणायाम का विचार किया जाता है। प्राण अर्थात् श्वास और आयाम अर्थात् लम्बाई- तात्पर्य श्वास की लम्बाई को प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम का प्रयोजन यह है कि बहुत देर तक श्वास रोका जावे। बहुत समय तक प्राणायाम करने से चित्त एकाग्र हो जाता है। प्राणायाम का मुख्य लाभ यह है कि यदि योगशास्त्र के अनुकूल श्वास भीतर बाहर छोड़े तो शरीर की नीरोगता की उन्नति होती है।'' (पूना प्रवचन-११)

'आयुर्वेद के ज्ञाता महर्षि दयानन्द' में डॉ. प्रशान्त वेदालंकार पृ. ५६ पर म.द.स. का जीवन चरित भाग २ पृ. १५५ का उद्धरण देते हैं-

''सन् १८७९ में महर्षि दानापुर में आये वहां उन्होंने प्राणायाम की भी शिक्षा दी। वे प्राणक्रिया से भयंकर रोगों की शान्ति मानते थे। इससे आत्मिक, गुणों का विकास, प्रतिभा की जागृति और मानस शक्ति की उपलब्धि का होना भी वे स्वीकार करते थे।''

इस विषय में स्वामी सत्यपति जी परिव्राजक, प्राचार्य, दर्शन योग महाविद्यालय के प्रवचनांशों को भी उद्धृत करना चाहता हूँ। स्वामी सत्यपति जी की 'योग-मीमांसा' पुस्तक के अंत में लिखे 'हठ-योग' के खण्डन परक लेख की दुहाई अतिवादी देते रहते हैं। उस लेख में हठयोग प्रदीपिका की जिन वेद विरुद्ध बातों का खंडन किया गया है, उनसे मैं सहमत हूँ। पर अतिवादियों को स्वामी सत्यपति जी के इन प्रवचनांशों पर भी गौर करके अपने विरोध को परिमार्जित कर संतुलित कर लेना चाहिये। विरोध उचित हो, अनुचित नहीं।

(क) ऋषि उद्यान अजमेर में हुए साधना-स्वाध्याय-सेवा शिविर के शिविरार्थियों को संबोधित करते हुए दि. २४/१०/०२ को स्वामी सत्यपति जी ने प्रेरणा दी-

''इस शिक्षण शिविर में बहुत कुछ सीख सकते हैं, बहुत कुछ जान सकते हैं और अपनी योग्यता बना करके आप स्वयं भी योग विषय में शिक्षक बन सकते हैं। आप क्या आसनों का प्रशिक्षण लेते हैं आजकल? तो क्या आपने ऐसा विचार किया कि हम भी आसनों को अच्छे प्रकार से सीख करके औरों को सिखायेंगे? आपमें से किसी ने ऐसी योजना बनाई? हाथ खड़ा करो बनाई हो तो।

इस वर्तमान काल में आप देखेंगे कि आसनों का, व्यायाम का और खेलों का भी, दौड़ का ये प्रचलन पर्याप्त रूप में चलता है और आसनों का अच्छे प्रकार से

यदि प्रशिक्षण देने लग जायें तो वहां सैंकड़ों लोग इकट्ठे हो जाते हैं। एक बार आस्ट्रेलिया में लोगों को दौड़ लगाते हुए देखा, बाजार में, क्या समझे आप? .....इसीलिये तो आश्चर्य की बात है। ....(आस्ट्रेलिया की शुद्धि की प्रशंसा में कुछ वाक्य)......।

तो वो दौड़ लगाते हैं व्यक्ति। मैंने कहा ये दौड़ क्यों लगा रहे हैं नगर में? कहतें हैं- अपना व्यायाम करते हैं दौड़ लगाके। और यहाँ आपको दौड़ लगानी पड़ जाये बाजार में तो बड़ी लज्जा आयेगी, बड़ी शरम आयेगी कि क्यों दौड़ रहा है यह?

तो एक तो यह कार्य करें आप आसनों का अच्छे प्रकार से प्रशिक्षण देने की योग्यता प्राप्त करें। आसनों के संबंध में व्यक्ति अधिक प्रभावित हैं। और आसनों का प्रशिक्षण जब आप देंगे तो उसी के माध्यम से वैदिक-धर्म की बातें उन लोगों को बता-बता कर उसको तैयार कर देंगे। एक बात।

और उसी के साथ आसनों का प्रशिक्षण देना और कुछ समय बचाकर रखना और फिर ओ३म् का जप, गायत्री का जप, वैदिक-धर्म की चर्चा, तो उनको कुछ काल उसमें लगाओ, आसनों के पीछे। तो उससे वैदिक धर्म में लोग आयेंगे, हमारे साथ संबद्ध हो जायेंगे।

तीसरी बात। आप स्वामी दयानन्द जी के ग्रन्थों को इस प्रकार पढ़ें गंभीरता से, आप उनको पढ़ा भी सकते हैं, इतनी योग्यता बनायें।........."

(ख) स्वामी रामदेव जी के अभिनन्दन कार्यक्रम के अवसर पर ऋषि उद्यान अजमेर में दि. ०७/११/०४ को जन सामान्य को उद्बोधन देते हुए स्वामी सत्यपति जी ने गायत्री मंत्र पाठ के बाद कहना आरम्भ किया- "हमारे स्वामी जी महाराज (रामदेव जी) ने कितने हजारों लोगों को योग के क्षेत्र में प्रेरित किया। और मैं भी स्वामी जी महाराज के कार्यक्रम में उपस्थित हुआ, इन्होंने स्मरण किया और उस कार्यक्रम को मैंने अच्छी प्रकार देखा।

देश-जाति-धर्म को बचाने के लिये, वैदिक परंपरा को बचाने के लिये, सभी का शरीर स्वस्थ हो बलवान् हो, खान-पान की शुद्धि, अपने देश की रक्षा के लिये हमारी दृष्टि, उन्होंने अच्छे प्रकार से प्रतिपादित किया और मुझे बहुत अच्छा लगा। इसको मैं यूं भी सोचता हूं कि स्वामी जी महाराज शरीर को स्वस्थ बना बनाकर के आयुर्वेद का एक भाग है इनका, आसन प्रशिक्षण का एक दूसरा भाग है, और भी विविध प्रकार से प्राणायाम के प्रयोग हैं, सभी सामान्य लोगों को ये उस स्तर पर पहुँचा देते हैं जहाँ पर ऊँचा योग सिखाने के लिये मुझे आधार मिल जाता है। नहीं आया समझ में? फिर दोहरा लो। कोई पृष्ठभूमि बनाई जाती है, अब गंभीर योग की बात, समाधि की बात-ध्यान देना-उसको हम लोगों को सिखा सकें, ईश्वर का साक्षात्कार हो सके, वो सारी पृष्ठभूमि स्वामी जी बनाके तैयार कर देते हैं। इसलिये हम को सुविधा हो जाती है। देश और विदेश में योग के नाम से बहुत प्रचार और प्रसार है। स्मरण रखना-स्वामी दयानन्द सरस्वती तो हैं ही ऐसे-याद रखना-उनके विषय में लंबा नहीं कह पाऊंगा। परन्तु आदि सृष्टि से लेके लाखों ऋषि हुए हैं, आगे चलो तो करोड़ों पर भी संख्या जाती है कभी, और उसी श्रृंखला में, उसी तारम्य में, उसी प्रगति में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी उत्पन्न हुए।..............."।

लोग कहते हैं 'हठयोग' से चिकित्सा करने का राजकीय मान्यता प्राप्त प्रमाण पत्र होना चाहिए, उसके बिना ऐसा करना कानून के विरुद्ध होगा। वे यह नहीं जानते कि सरकार का ऐसा कोई नियम ही नहीं है। जिस प्रकार वेदोपदेश, पातंजल योग सिखाने, यज्ञ प्रशिक्षण व यज्ञ चिकित्सा करने के लिये किसी राजकीय मान्यता प्राप्त प्रमाण पत्र की आवश्यकता नहीं है वैसे ही 'हठयोग' सिखाने व उससे चिकित्सा करने के लिये भी।

लोग यह भी कहते हैं ऐसी हठयोग द्वारा चिकित्सा को किसी पैथी में मान्य नहीं किया गया, सरकार भी इसे न तो सिखाती है न इससे उपचार करवाती है। इस विषय में निवेदन है कि प्राकृतिक चिकित्सा (नैचुरोपैथी) के सरकार मान्य पाठ्यक्रम में तो इसे पढ़ाया जाता ही है,

आयुर्वेदाचार्य (बी.ए.एम.एस.) के पाठ्यक्रम में भी हठयोग समावेशित है। सरकारी संस्थाओं में योग के मान्य पाठ्यक्रम हैं व उनसे उपचार भी किया जाता है।

आर्यसमाज में 'हठ-योग' का विरोध करने वालों का एक कथन यह है कि- यदि हठ योग का प्रचार हो गया तो लोग मात्र इसे ही मुक्ति का उपाय समझेंगे, फलतः 'पातंजल-योग' को लोग भूल जायेंगे व मुक्ति से वंचित हो जायेंगे। यह बड़े अनर्थ-पाप का कार्य होगा। इस विषय में निवेदन है कि स्वयं हठयोग प्रदीपिका में हठयोग को राजयोग (=समाधि) की सिद्धि में सहायक कहा है, राजयोग को ऊँचा स्थान दिया है, ऐसे में राजयोग (समाधि) व उसके प्रतिपादक पातंजल योग दर्शन के लोप की आशंका व्यर्थ लगती है। हठयोग प्रदीपिका के निम्नलिखित उद्धरण देखें-

(क) 'केवलं राजयोगाय हठविद्योपदिश्यते' (१.२)

केवल राजयोग की सिद्धि के लिये हठविद्या का उपदेश किया जा रहा है।

(ख) राजयोगमजानंतः केवलं हठकर्मिणः।
एतानभ्यासिनो मन्ये प्रयासफल वर्जितान्॥
(४.७९)

जो राजयोग को नहीं जानते, केवल हठयोग की क्रियायें करते हैं, उन अभ्यासियों के प्रयास को मैं निष्फल समझता हूँ।

(ग) सर्वे हठलयोपाया राजयोगस्य सिद्धये।
(४.१०३)

सारे हठ व लय के उपाय राजयोग की सिद्धि के लिये ही कहे गये हैं।

'हठ-योग' को स्वीकारने वाले जितने प्रशिक्षकों के संपर्क में मैं आया उनमें से एक भी ऐसा नहीं मिला जो मात्र 'हठ-योग' से मुक्ति की बात कहता-मानता हो। सब के मन में पातंजल योग दर्शन के प्रति श्रद्धा का भाव है व वे इसे ऊँचा योग मानते-कहते हैं। हठयोग के वेद विरुद्ध अंशों की आलोचना करने वाले स्वामी सत्यपति जी के ऊपर उद्धृत प्रवचनांशों से भी स्पष्ट है कि वर्तमान में चल रहे स्वामी रामदेव जी जैसे योग-शिविरों से लाभ हो रहा है, उससे ऊंचा योग (=पातंजल योग, राजयोग, समाधि, ईश्वर साक्षात्कार की बात) सिखाने में पृष्ठ भूमि तैयार हो रही है।

हठयोग सिखाने वालों का अपनी शैली के पक्ष में एक तर्क है- आसनादि सिखा कर चिकित्सा करके हम लोगों को जोड़ते हैं व फिर पातंजल योग व वैदिक धर्म की बातें भी बताते हैं। सीधे मात्र पातंजल योग व वैदिक धर्म की बातें बताने से लोग कम जुड़ते हैं। इस शैली की निंदा करने वाले कहते हैं- लोग आपसे मात्र चिकित्सा कराने आयेंगे उन्हें आप बलात् अन्य बातें सुनायेंगे तो भी वे नहीं सुनेंगे, आपका परिश्रम व्यर्थ जायेगा। इस विषय में निवेदन है कि हमें आशावादी रहना चाहिए, यदि लोगों की इच्छा नहीं हो तो भी प्रचारकों का कर्त्तव्य है कि वे अनिच्छा वालों में भी इच्छा पैदा कर दें। यह तो कोई नियम नहीं कि मात्र इच्छुकों को ही बताया जाये। आसनादि से लोगों को जोड़ कर वैदिक धर्म की बातें बताई जा सकती हैं- यह उचित व संभव है और इसकी पुष्टि स्वामी सत्यपति जी के ऊपर लिखित प्रवचनांशों से भी होती है।

अतिवादी यह भी कहते हैं 'योग' के नाम पर 'हठ-योग' सिखाना जनता से धोखा है, जैसे 'घी' नाम से 'वनस्पति घी' बेचना। इस विषय में निवेदन है कि-

यह आक्षेप उस समय उचित हो सकता था जब मात्र घी (=देसी घी) ही प्रचलन में था। आज देसी घी की कुछ समानता से नये प्रकार के जमने वाले द्रव्य को 'वनस्पति घी' नाम दे दिया गया। अब जबकि नये घी का प्रचलन भी बहुत हो चुका है ऐसे में प्रसंग भेद से 'घी' का अर्थ 'देसी घी' व 'वनस्पति घी' दोनों लिया जाता है। जिस घर या दुकान में 'वनस्पति घी' ही होता है वहाँ 'घी' का अर्थ 'वनस्पति घी' ही लिया जाता है, वहाँ मात्र 'घी' शब्द बोलने में दोष नहीं। वहाँ मात्र घी शब्द बोल कर किसी को धोखा नहीं दिया जा रहा। यदि कोई 'वनस्पति घी' को 'वनस्पति घी' कहकर देता-

लेता है तो इसमें यह दोष नहीं कहा जा सकता कि यह 'घी' के नाम पर धोखा दे रहा है। धोखा तब होता जब 'देसी घी' कह कर 'वनस्पति घी' दे देता। कभी 'घी' नाम से 'देसी घी' ही प्रचलित था, पर आज समाज में 'देसी घी' व 'वनस्पति घी' दोनों व्यापक रूप से प्रचलित हैं। ऐसे में 'वनस्पति घी' के साथ 'घी' शब्द को हटाना अति कठिन है व अनावश्यक भी। अब तो हमें स्पष्टता के लिये 'शुद्ध घी' 'असली घी' या 'देसी घी' इन शब्दों का आवश्यकता होने पर प्रयोग करना ही होगा। परिस्थित भेद से 'देसी घी' व 'वनस्पति घी' के लिए 'घी' शब्द का प्रयोग भी साथ में चल सकता है।

इसी प्रकार कभी 'योग' शब्द से अष्टांग-पातंजल योग ही प्रचलित रहा होगा, किन्तु आज अनेक विशेषणों के साथ 'योग' शब्द प्रचलित हो चुका है। ऐसे में यदि कोई 'हठ-योग' को 'हठ-योग' के नाम से सिखा रहा है तो उसका "हठ' शब्द के साथ 'योग' शब्द जोड़ना अनुचित क्यों माना जाये? जहाँ 'हठ-योग' ही सिखाया जाता है वहां उसके लिये मात्र 'योग' शब्द बोलने में भी कोई दोष नहीं। जहां प्राचीन व अर्वाचीन दोनों योग बताये जाते हों वहाँ पातंजल/अष्टांग/वैदिक/हठ आदि विशेषण देकर योग शब्द का व्यवहार करना होगा। यदि कोई व्यक्ति 'हठ-योग' को पातंजल-योग/अष्टांग योग कह कर सिखाये तो धोखा देना कहा जा सकता है, अन्यथा नहीं।

अतिवादियों का यह भी कहना है कि 'अष्टांग योग' से चिकित्सा करना सत्य नहीं है। क्योंकि योग का मुख्य लक्ष्य 'मुक्ति प्राप्ति' है, स्वास्थ्य-लाभ तो उसका पार्श्व प्रभाव है-गौण है। 'अष्टांग योग' में शरीर-चिकित्सा का विधान नहीं है। इस विषय में निवेदन है कि यद्यपि 'अष्टांग योग' का मुख्य लक्ष्य 'मुक्ति प्राप्ति' है किन्तु वह तो सबसे अंत में प्राप्त होगी। जब तक मुक्ति नहीं होगी तब तक भी तो 'अष्टांग योग' के लाभ मिलेंगे, और उस समय की दृष्टि से वे गौण-लाभ ही मुख्य-लाभ बन जायेंगे। यदि कोई प्रशिक्षक मुक्ति प्राप्ति के लक्ष्य को न बतावे, भुला दे तब दोष माना जा सकता है। यदि नया व्यक्ति या बच्चा मुक्ति को न जाने-समझे भी अन्य तात्कालिक लाभ जान कर यम-नियम-आसन-प्राणायाम-ध्यान करता है तो प्रोत्साहन के योग्य है, न कि निंदा के योग्य। गौण-तात्कालिक प्रत्यक्ष लाभ मिलने से व्यक्ति में श्रद्धा पैदा होती है व वह परोक्ष लाभ वाली बातों पर भी विश्वास करके उस दिशा में यत्न करता रहता है। इस मनोविज्ञान को 'पातंजल योग दर्शन' के भाष्यकार महर्षि व्यास ने भली भांति समझा था। तभी तो उन्होंने समाधिपाद के ३५वें सूत्र के भाष्य में लिखा-

"......यावदेकदेशोऽपि कश्चिन्न स्वकरणसंवेद्यो भवति तावत्सर्वं परोक्षमिवापवर्गादिषु सूक्ष्मेष्वर्थेषु न दृढां बुद्धिमुत्पादयति।"

अर्थ- जब तक (शास्त्र का) एक अंश अपने प्रत्यक्ष से (लाभ कर) अनुभूत नहीं होता तब तक मोक्षादि सूक्ष्म विषयों में दृढ़ विश्वास नहीं होता।

अतः यदि योग से स्वास्थ्य वृद्धि, एकाग्रता, शांति आदि गौण लाभ भी हो रहे हों व उसी के लिये कोई योग सीख रहा हो तो भी दोष नहीं। यह प्रशिक्षक का कर्त्तव्य है कि वह सीखने वालों को मुख्य लक्ष्य मोक्ष से अवगत करावे व उनको उस ओर प्रेरित करे। यदि कोई प्रशिक्षक इतना कर लेता है तो योग से चिकित्सा करने में क्या दोष आयेगा? लाभ ही होगा।

ऐसा कहना कि पातंजल योग में शरीर चिकित्सा का विधान नहीं है, अनुचित है। पातंजल योग दर्शन समाधिपाद के २९,३०,३१ व ३२ सूत्र यह प्रमाणित करते हैं कि 'अष्टांग योग' में शरीर की भी चिकित्सा का विधान है। सूत्र ३० के भाष्य में 'व्याधि' नामक अंतराय की व्याख्या में लिखा है- **"व्याधिर्धातुर-सकरणवैषम्यम्"** अर्थात् वात-पित्त-कफ, रसादि धातु व इन्द्रियों में वैषम्य होना ही व्याधि है। अन्तरायों के प्रतिषेध-अभाव का उपाय 'पातंजल योग' में बताया गया है। यदि यह मानें कि 'पातंजल योग' से चिकित्सा संभव नहीं है तो शास्त्र के वाक्य ही अप्रामाणिक हो

जायेंगे। सांख्यदर्शन में महर्षि कपिल ने कहा है- **''नाशक्योपदेशविधिरुपदिष्टेऽप्यनुपदेश:''** शास्त्र में अशक्य-असंभव का उपदेश नहीं होता, यदि अशक्य का उपदेश हो तो वह उपदेश कहलाने लायक भी नहीं है।

महर्षि दयानन्द ने सत्यासत्य के निर्णयार्थ ५ प्रकार की परीक्षायें लिखी हैं। हठयोग की ज़ो क्रियायें आर्यसमाज में कराई जा रही हैं उनका विरोध करने से पूर्व अतिवादियों को प्रमाणों द्वारा यह बताना चाहिये कि ये क्यों त्याज्य हैं? ये वेद विरुद्ध कैसे हैं? महर्षि दयानन्द के वाक्यों का गलत अभिप्राय समझ कर उन्हें प्रमाण रूप से प्रस्तुत करके वे महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों की रक्षा नहीं कर रहे वरन् महर्षि दयानन्द के प्रति भ्रांति व अश्रद्धा फैला कर उनकी प्रामाणिकता को नष्ट कर रहे हैं और ऐसा करके वे वैदिक धर्म की हानि कर रहे हैं। अतिवादियों द्वारा बताये गये अभिप्राय को मन में बैठा चुके व्यक्ति जब महर्षि दयानन्द के तद्विपरीत वचनों-प्रसंगों को पढ़ेंगे तो वे उनके प्रति विश्वास खो बैठेंगे, वे सोचेंगे कैसा ऋषि है? परस्पर विरोधी बातें कहता है।

जन सामान्य जब हठयोग की क्रियाओं से शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य वृद्धि व निरोगता का लाभ अनुभव कर रहा हो, ऐसे में यह प्रचारित करना कि ये सब महर्षि दयानन्द व वेद के विरुद्ध है, तो इससे वह महर्षि दयानन्द व वेद के प्रति विश्वास खो देगा और उनकी अन्य अच्छी बातों से भी वंचित हो जायेगा। इसका पाप इन अतिवादियों को लगेगा जिन्होंने अपने हठ-दुराग्रह से महर्षि दयानन्द व वेदों की विश्वसनीयता घटाई व जनता को इनसे विमुख कर इनके लाभ से वंचित किया।

इन्होंने योगदर्शनकार महर्षि पतंजलि को भी संकुचित करके उनके प्रति अन्याय किया है। ये मानते हैं कि जितना 'पातंजल-योग-दर्शन' में लिखा है बस वही योग है। जो बात 'पातंजल-योग-दर्शन' में नहीं वह योग-दर्शन के विरुद्ध है, वह मान्य नहीं। वे नहीं समझ पा रहे कि 'पातंजल योग दर्शन' अपने आप में पूर्ण होते हुए भी है तो सूत्र रूप में ही। सारी बातों का उल्लेख सूत्र शैली में कैसे हो सकता है? महर्षि दयानन्द द्वारा मूल बंध, इडा-पिंगला-सुषुम्णा नाडी, पंचकोश आदि का उल्लेख किया गया है, जो कि 'पातंजल योग' दर्शन में नहीं हैं, तो क्या इन्हें भी 'पातंजल योग' विरुद्ध मान लें? वस्तुत: 'पातंजल योग' दर्शन में उल्लेख न होने मात्र से कोई बात योग विरुद्ध, वेद विरुद्ध नहीं हो जाती। हाँ, यदि कोई बात वेद, पातंजल-योग व अन्य ऋषियों के सिद्धान्तों के विपरीत हो तो वह विरुद्ध मानी जाकर त्याज्य होगी।

प्रस्तुत प्रसंग में अतिवादी बतायें कि आर्यसमाज में जो हठयोग का अंश कराया जाता है उसमें से कौन-कौन सा अंश पातंजल योग दर्शन, वेद या ऋषियों के किस सिद्धान्त के विरुद्ध है? यदि वे यह सिद्ध कर देते हैं तो सबको 'हठ योग' की उन-उन क्रियाओं को छोड़ देना चाहिए।

अतिवादियों को सादर आह्वान है- यदि वे शब्द प्रमाण व तर्कों से सहमत न हो पा रहे हों व सत्य का निर्णय करना चाहते हों तो आगे आयें, ऐसे शिविरों में वे भी भाग लेवें मैं भी लूंगा, शिविरार्थियों का निष्पक्ष चिकित्सकों से शिविर पूर्व व शिविर पश्चात् परीक्षण करावें। फिर जो निष्कर्ष आये उसे मैं भी मानूंगा व वे भी मानें। इस सब में होने वाले व्यय की आधी व्यवस्था हम करें, आधी वे करें।

हमें अपने अतिवादी दृष्टिकोण को छोड़ ऋषियों को उनकी गरिमा के अनुरूप समझकर उनकी बातों से ज़न सामान्य का अधिकाधिक हित करना चाहिए, न कि संकुचित-कट्टरवादी दृष्टिकोण बनाकर शास्त्रों की सीमा को छोटा कर उनके लाभ से जनता को वंचित करना चाहिए।

अंत में विज्ञ पाठकों से निवेदन है कि इस लेख में लिखे विषय पर कृपया वे अपनी समालोचना लिखें व उससे मुझे भी अवगत करावें। हो सकता है सत्यासत्य निर्णय में वे भी महत्त्वपूर्ण विचार देकर सहयोगी बन जावें। मैं आपका आभारी रहूँगा।

आचार्य, महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल,
ऋषि उद्यान, अजमेर, राजस्थान

साधना, स्वाध्याय एवं सेवा शिविर

(ज्येष्ठ शुक्ल १० से आषाढ़ कृष्ण ५, २०६२ तदनुसार १७ से २६ जून २००५ तक)

आपके मन के किसी कोने में साधना करने की इच्छा बीज रूप में अंकुरित हो रही हो, अपने सर्वश्रेष्ठ जीवन को वेद एवं ऋषियों के आदर्शानुकूल ढालना चाहते हों, विधेयात्मक एवं सृजनात्मक जीवन चाहते हों, अपने मन को पवित्र बनाने की इच्छा रखते हों, वैदिक साधना-पद्धति को जानना समझना चाहते हों, वैदिक सिद्धांतों को समझना चाहते हों या अपने को वैदिक-धर्म के प्रचार-प्रसार में समर्पित करने की अभिलाषा रखते हों तो यह शिविर आपको आपके चिंतन के अनुरूप उचित दिशानिर्देश एवं उत्तम अवसर प्रदान करेगा।

शिविरार्थियों को पूर्ण लाभ मिल सके एतदर्थ अनुशासन में चलना नितांत आवश्यक होगा। शिविर के दिनों में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह का पालन एवं मौन के निर्धारित समय में मौन रहना अनिवार्य होगा। शिविर के पूरे काल में साधक को पत्र दूरभाष आदि किसी भी प्रकार से बाह्य संपर्क निषेध है। ऋषि उद्यान के अंदर ही निवास करना होगा। समाचार-पत्र पढ़ने, आकाशवाणी सुनने, दूरदर्शन देखने की अनुमति नहीं है। धूम्रपान, तम्बाकू या अन्य किसी भी प्रकार के मादक द्रव्य का सेवन निषिद्ध रहेगा। नये शिविरार्थियों को शिविर की सभी कक्षाओं में उपस्थित रहना अनिवार्य है।

जो साधक इन नियमों तथा शिविर की दिनचर्या को स्वीकार करें वे मंत्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से पत्र/दूरभाष/समक्ष संपर्क कर शिविर से पूर्व अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की व्यवस्था पृथक्-पृथक् सामूहिक की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बरतन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, कंबल, रजाई, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएं। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन व संस्कार विधि हो तो साथ लाएं अन्यथा यहाँ भी क्रय की जा सकती हैं। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जाता है। शिविर शुल्क ५०० रु. मात्र जमा करना होगा। शुल्क में पात्रता व आर्थिक दृष्टिकोण से असमर्थता देखकर न्यूनता करना आयोजक के अधिकार में होगा।

विशेष- प्रो. धर्मवीर जी द्वारा इच्छुक शिविरार्थियों को संस्कार-कर्मकाण्ड का प्रशिक्षण भी दिया जायेगा। पुराने/योग्य शिविरार्थियों को आचार्य सत्यजित् जी योग दर्शन का पुरा चौथा पाद पढ़ायेंगे।

शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक से १ दिन पूर्व सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबंधी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी और शिविर का प्रारंभ प्रथम दिन प्रातः ३.४५ से हो जायेगा। शिविर का समापन अंतिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा।

स्थानीय सज्जन सुविधानुसार विभिन्न कक्षाओं में आकर लाभ उठा सकते हैं।

सूचना- ऋषि उद्यान, अजमेर में व्यायाम प्रशिक्षण, चरित्र व संस्कार निर्माण शिविर बालकों के लिये १७ से २४ मई तथा बालिकाओं के लिये ५ से १२ जून तक आयोजित किया गया है। इसमें १२ वर्ष से बड़े बालक-बालिकायें भाग ले सकते हैं।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, शुभकामनाओं के साथ।

मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : २४६०१६४

Web Site :- www.paropkarinisabha.com

E.mail address:- Paropkarinisabha@paropkarinisabha.com

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुँचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वालीसिटी बस, ऑटो रिक्शा, रल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ हैं।

आर्य जगत् के समाचार

प्रवेश सूचना

गुरुकुल प्रभात आश्रम मेरठ

प्राचीन वैदिक संस्कृति एवं परम्परा के संवाहक आर्ष प्रणाली के उन्नेता गुरुकुल प्रभात आश्रम मेरठ में प्रवेश परीक्षा २१ से ३० जून सायंकाल तक सम्पन्न होने जा रही है। प्रवेशार्थी छात्र ५ श्रेणी उत्तीर्ण, स्वस्थ १० वर्षीय मेधावी होना चाहिए। सम्पर्क करें- आचार्य गुरुकुल प्रभात आश्रम, भोला झाल, मेरठ, उ.प्र.। दूरभाष- ०१२१-२८८०९९२

गुरुकुल साधु आश्रम अलीगढ़

श्री सर्वदानन्द संस्कृत महाविद्यालय गुरुकुल साधु आश्रम अलीगढ़ में ८ जुलाई से प्रवेश प्रारम्भ है, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग भारत सरकार से सम्बद्धता, उ.प्र. सरकार से अनुदानित प्रथमा से उत्तर मध्यमा तक उ.प्र. माध्यमिक संस्कृत शिक्षा परिषद लखनऊ, शास्त्री, आचार्य की सम्पूर्णनन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी से स्थायी मान्यता है। वैदिक शिक्षा की व्यवस्था, वेद दर्शन, व्याकरण, साहित्य, गणित, विज्ञान, अंग्रेजी, कम्प्यूटर, संगीत आदि की सुयोग्य आचार्यों द्वारा शिक्षण व्यवस्था। राष्ट्रीय सेवा योजना की मान्यता, उपदेशक पाठ्यक्रम की व्यवस्था। आर्ष पाठ विधि नैष्ठिक छात्रों को निःशुल्क भोजन व्यवस्था। प्रवेश शुल्क ५००/- रु., भोजन शुल्क ३००/- रु. मासिक। अलीगढ़ से अतरौली मार्ग पर स्थित/अभिभावक अपने बच्चों के प्रवेश हेतु १०/- रु. नकद देकर नियमावली कार्यालय से प्राप्त करें। दूरभाष- ०५७१-२७८०७९५

गुरुकुल महाविद्यालय करतारपुर, पंजाब

इस गुरुकुल में छठी से पन्द्रहवी कक्षा तक के अध्ययन की व्यवस्था है। यह संस्था गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से सम्बद्ध है अत: वहीं की परीक्षाएं विद्याधिकारी (मैट्रिक) संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, सामाजिक, गणित और विज्ञान विषयों में, विद्याविनोद (+२) संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, इतिहास, दर्शन विपयों में तथा वेदालंकार, विद्यालंकार (बी.ए.) संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी साहित्य, सामान्य अंग्रेजी, वेद राजनीति शास्त्र तथा दर्शन विषयों में दिलाई जाती है। छठी से आठवी तक का पाठ्यक्रम संस्कृत को छोड़कर अन्य विषयों में पंजाब शिक्षा बोर्ड का है।

इस वर्ष नये सत्र के लिए छठी से आठवीं कक्षाओं में प्रवेश के इच्छुक नये छात्रों की प्रवेश परीक्षा गणित, हिन्दी और अंग्रेजी में निचली कक्षाओं के पाठ्यक्रम के आधार पर होगी। गणित भाग अनिवार्य होगा तथा हिन्दी और अंग्रेजी में से किसी एक को करना होगा। परीक्षा १३ जून २००५ को सोमवार प्रात: ९ बजे प्रारम्भ होगी और परीक्षा परिणाम उसी दिन सायं तक सुना दिया जाएगा। अत: प्रवेशार्थियों को एक दिन पूर्व ही पहुंचना उचित रहेगा। नौवीं कक्षा में नया प्रवेश ४ जुलाई ०५ को आठवीं का प्रमाण-पत्र देखकर मौलिक परीक्षा पूर्वक होगा। विद्या विनोद तथा वेदालंकार में नये छात्रों का प्रवेश १६ से ३१ जुलाई ०५ तक होगा।

गुरुकुल में आवास, शिक्षा तथा भोजन की व्यवस्था निःशुल्क है। किन्तु वस्त्र, साबुन, तेल, पुस्तकादि का व्यय छात्र के अभिभावक को वहन करना पड़ता है। नौवीं से पन्द्रहवीं तक के परीक्षार्थियों को विश्वविद्यालय भेजी जानी वाली प्रवेश शुल्क का भी भुगतान करना होता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक छात्र को ४००/- रु. धरोहर शुल्क (सुरक्षा धन) जमा कराना होगा, जो विद्यालय त्याग के समय अथवा वार्षिक परीक्षा के पश्चात् लौटा दिया जाता है। इस वर्ष सस्वर वेदपाठ का छह वर्षीय पाठ्यक्रम भी प्रारम्भ किया गया है। इसमें छठी कक्षा के छात्र भाग ले सकेंगे। वेदपाठ के लिए चुने गए छात्रों को ५००/- रु. प्रतिमास महर्षि सान्दीपिनी वेद विद्यालय प्रतिष्ठान उज्जैन से छात्रवृत्ति के रूप में प्राप्त होंगे। जो उन-उन छात्रों के सावधि बैंक खाते में जमा होते रहेंगे और पाठ्यक्रम की पूर्णता पर ब्याज सहित छात्रों को दे दिए जाएंगे। ये छात्र कक्षा के अन्य छात्रों के साथ दूसरे विषय भी पढ़ेंगे।

विशेष- परीक्षार्थी सफेद कुर्ता तथा सफेद पायजामा पहनकर ही प्रवेश परीक्षा में भाग ले सकेंगे।

दूरभाष- ०१८१-२७८२२५२

गुरुकुल महाविद्यालय नर्मदापुरम् होशंगाबाद, म.प्र.

आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय नर्मदापुरम् होशंगाबाद, म.प्र. एक ऐसा शिक्षण संस्थान है। जहाँ पर बालकों को वेद-वेदाङ्ग-संस्कृत व्याकरण आदि के साथ-साथ भूगोल, विज्ञान, गणित, अंग्रेजी आदि विषयों का अध्ययन कराया जाता है। २१ जून ०५ को मौखिक एवं लिखित परीक्षा ली जाएगी इस परीक्षा में उत्तीर्ण छात्रों को ही स्थायी प्रवेश दिया जाएगा। एक छात्र पर लगभग छः-सात सौ रुपये अभिभावकों द्वारा मासिक भोजन आदि पर व्यय भार वहन करना होता है। स्थान सीमित है। सम्पर्क करें- आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय, नर्मदापुरम्, होशंगाबाद, म.प्र., दूरभाष-०७५७४-२७५७८८

चलता फिरता आर्यसमाज स्वामी सांख्यायन

कर्मयोगी के सम्पादक तपोनिष्ठ योगी स्वामी सांख्यायन जी के कार्यक्रमों की १९९६-९९ में हिमाचलों के आंचलों में धूम मची। स्वामी जी के मार्गदर्शन में पातंजली योग विद्या शिक्षाा शिविरों का आयोजन होता रहा। शिविरार्थियों को स्वामी सांख्यायन जी ने आपने तपसाधना काल में योग विद्या में किये गये आविष्कारों को साधकों के समक्ष प्रस्तुत कर किया साथ में महर्षि दयानन्द जी के अभिप्रेत वैदिक सिद्धान्तों से साधकों को परिचित कराया।

स्थापना दिवस व गायत्री महायज्ञ सम्पन्न

हर वर्ष की भांति आर्यसमाज यू.के. का स्थापना दिवस एवं गायत्री महायज्ञ १० अप्रैल को बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। यज्ञ के मुख्य यजमान आर्यसमाज लन्दन के बोर्ड ऑफ ट्रस्ट के चैयरमैन श्री डॉ. मदन जी एवं श्रीमती प्रतिभा बहल और परिवार के सभी सदस्य थे। महायज्ञ के ब्रह्मापद को सुशोभित किया सर्वश्री प्रो. सुरेन्द्रनाथ भारद्वाज (प्रधान), पुरोहित डॉ. रामचन्द्र शास्त्री, श्रीमती पं. वेदवती शर्मा एवं श्री पं. केशवदेव धीमान वेदालंकार ने। सभी ने वैदिक सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला। सम्पूर्ण कार्यक्रम का संचालन श्रीमती कैलाश भसीन ने किया। ऋषि लंगर की उत्तम व्यवस्था मुख्य यजमान की थी। इस अवसर पर वैदिक साहित्य का वितरण आर्यसमाज लन्दन की ओर से किया गया। कार्यक्रम के सफल आयोजन के लिए सब का आभार एवं धन्यवाद डॉ. श्री मदन बहल ने किया।

शोक - समाचार

स्वामी श्री शिवानन्द जी मस्ताना का देहावसान

स्वामी श्री शिवानन्द जी मस्ताना का गत वर्ष देहावसान हो जाने की सूचना प्राप्त हुई है। स्वामी जी वर्षों से विभिन्न स्थानों पर रहते हुए आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार कर रहे थे। वे भरतपुर, अहमदाबाद, अजमेर आदि स्थानों पर लम्बे समय तक रहे। हंसमुख प्रकृति के, सब को खिलखिलाकर हंसाने वाले स्वामी जी अद्भुत स्मरण-शक्ति के धनी थे। उन्हें लम्बी-लम्बी कवितायें, जीवनोपयोगी-मार्मिक-शिक्षाप्रद दोहे सदा उपस्थित रहते थे। वे यथा अवसर उनका उचित प्रयोग करते रहते थे। पिछले कुछ वर्षों से वे पक्षाघात से पीड़ित थे व अपनी पत्नी-पुत्र-पुत्रियों के पास आगरा के निकट रह रहे थे।

उनके देहावसान की सूचना से सभी को हार्दिक वेदना हुई है। परोपकारिणी सभा इसके लिये हार्दिक संवेदना प्रकट करती है। प्रभु से प्रार्थना करती है कि उनकी आत्मा पुनः मानव देह पाकर अपने लक्ष्य मोक्ष की ओर बढ़े, वैदिक-धर्म के प्रचार-प्रसार में सहयोग देती रहे। प्रभु उनके परिवार को यह शोक सहने की शक्ति प्रदान करे, उनमें यह भावना रहे कि हम अपने स्वामी ज़ी के दिखाये धर्म मार्ग पर ही चलेंगे।

श्री जयकरणसिंह दिवंगत

आर्यसमाज, फतेहपुर शेखावाटी, जि. सीकर, राजस्थान के प्रधान डॉ. जयकरणसिंह चौहान का देहावसान ७२ वर्ष की आयु में १ अप्रैल ०५ को हो गया। ४० वर्ष पूर्व उत्तर प्रदेश से आकर बसे श्री चौहान के तन-मन में गौभक्ति व आर्यसमाज बसे हुए थे। गौशाला, फतेहपुर के व्यवस्थापक रहते हुए आपने इस गौशाला की कृषि को समृद्ध कर दिया। आप पिछले एक वर्ष से अस्वस्थ चल रहे थे। आपके पाँचों पुत्र सामाजिक कार्यों में बढ़चढ़कर भाग लेते हैं।

परोपकारी परिवार की ओर से दिवंगत आत्माओं को हार्दिक श्रद्धाञ्जली

चुनाव समाचार

आर्यसमाज मोहननगर, करौली

संरक्षक- श्री रमाकान्त आर्य, **प्रधान**-श्री ओमप्रकाश आर्य, **उपप्रधान**- श्री रामखिलाड़ी आर्य, **मन्त्री**- श्री बिशनस्परूप गुप्ता, **उपमंत्री**- श्री भगवतप्रसाद जी, **कोषाध्यक्ष**- श्री रमेशचन्द्र सिंहल, **उपकोषाध्यक्ष**- श्री अशोक कुमार।

आर्यसमाज गांधी चौक, लातूर, महाराष्ट्र

प्रधान-श्री हरीशचन्द्र पाटील, **उपप्रधान**- श्री विपीनचन्द्र चामाझे, **मन्त्री**- श्री ओमप्रकाश पाराशर, **उपमंत्री**- श्री चन्द्रभानु परंडेकर, **कोषाध्यक्ष**- श्री धर्मवीर परंडेकर।

आर्यसमाज सुन्दरनगर कॉलोनी हि.प्र.

प्रधान-श्री आचार्य भगवानदेव जी, **उपप्रधान**- श्री कुलदीप मेहता, श्री नरेश कुमार मेहन, **मन्त्री**- श्री रघुवीरसिंह आर्य, **संयुक्तमंत्री, पुस्तकाध्यक्ष व प्रैस सचिव**- श्री अखिलेश भारतीय, **उपमंत्री**- श्री सुमित मेहन, श्री राजेश रावल, **कोषाध्यक्ष**- श्री बलवन्त सिंह, **भवन एवं भण्डार सचिव**- श्री राजकुमार कम्बोज, **लेखानिरीक्षक**- श्री हेमेन्द्र गुप्ता, **अधिष्ठाता आर्यवीरदल**- श्री दिनेश कुमार, श्री हेमेन्द्र जी, दयालसिंह जी, अनुराग शर्मा।

आर्यसमाज इटारसी

प्रधान-श्री शीलचंद अग्रवाल, **कार्यकारी प्रधान**- श्री जयकिशोर दुबे, **उपप्रधान**- श्री सुरेन्द्रसिंह अरोरा, श्री कोदूलाल साहु, श्री मनोज अग्रवाल, श्री नवीन कुमार शर्मा, **मन्त्री**- श्री पं० सुदर्शन देव आर्य, **कार्यकारी मंत्री**- श्री नवनीत कोहली, **उपमंत्री**- श्री संजय अग्रवाल, श्री देवदत्त आर्य, श्री महेन्द्र जी, **कोषाध्यक्ष**- श्री पं० शंकरसिंह आर्य, **संगठन मंत्री**- श्री मुकेश गांधी, **पुस्तकालयाध्यक्ष**- श्री राजेश जी।

आर्यसमाज कृष्णपोल बाजार जयपुर, राज.

प्रधान-श्री ओमप्रकाश विद्यावाचस्पति, **उपप्रधान**- श्री ओमप्रकाश वर्मा, विजय कुमार, श्री पवन कुमार पारीक, **मन्त्री**- श्री कौशलाधीश मिश्र, **उपमंत्री**- श्री पुरुषोत्तम दास, श्री प्रभातीलाल, श्री महेश शर्मा, **कोषाध्यक्ष**- श्री देवदत्त विजय, **आय-व्यय लेखा निरीक्षक**-श्री गुरुमुखदास चन्दवानी, **वेद प्रचार-प्रसार अधिष्ठाता**- श्री मदनमोहन जावलिया, **अधिष्ठाता आर्यवीरदल**- श्री जगदीश शर्मा, **पुस्तकाध्यक्ष**- श्री शंकरलाल शर्मा।

आर्यसमाज बल्केश्वर, आगरा

संरक्षक- श्री लक्ष्मनदास आर्य, श्री रामलाल बजाज, श्री महेशचन्द्र गुप्ता, **प्रधान**-श्री हंसराज आर्य, **उपप्रधान**- श्री तीर्थराम शर्मा, डॉ. के.के. अग्रवाल, **मन्त्री**- श्री ज्ञानप्रकाश गुप्ता, **उपमंत्री**- श्री डॉ. विश्वमित्र आर्य, **आय-व्यय निरीक्षक**- श्री आर.के. गुप्ता, **प्रचारमंत्री**- श्री श्यामसुन्दर बजाज, **पुस्तकालयाध्यक्ष**- श्री आर.एस. राठौर, **भवन व्यवस्थापक**- श्री सुधीर आनन्द।

आदर्श गुरुकुल विद्यालय, विशम्भरपुर, कन्नोज

प्रधान-श्री स्वामी प्रसादानन्दजी, **उपप्रधान**- श्री आत्मानन्द जी, श्री सुरेन्द्र मुनि जी, श्री विद्यानन्द आर्य, श्री झुन्नीलाल जी, **मन्त्री**- श्री बालकराम आर्यपथिक, **उपमंत्री**- श्री वीरेन्द्र कुमार वैद्य आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री बादशाहसिंह यादवार्य, **वेद प्रचार मंत्री**- श्री वेद प्रकाशार्य, **पुस्तकालयाध्यक्ष**- श्री ईशचन्द्रार्य जी, **निरीक्षक**- श्री श्रीकृष्ण आर्य।

आर्यसमाज बीसलपुर, पीलीभीत

प्रधान-श्री राजेन्द्रप्रसाद मिश्र, **उपप्रधान**- श्री विजय कुमार, **मन्त्री**- श्री मोहनस्वरूप जी, **उपमंत्री**- श्री चन्द्रपाल जी, **कोषाध्यक्ष**- श्री हरस्वरूप जी **पुस्तकालयाध्यक्ष**- श्री डॉ. सत्येन्द्र कुमार जी, **आय व्यय निरीक्षक**- श्री भूपराम जी।

आर्यसमाज कैथल शहर, हरियाणा

संरक्षक- लाला अमरसिंह, **प्रधान**-श्री लाला प्रीतिलाल आर्य, **उपप्रधान**- श्री अशोक वर्मा, श्री शिवकुमार बंसल, **मन्त्री**- श्री डॉ. देवव्रत आर्य, **उपमंत्री**- श्री मनसाराम पटवारी, **कोषाध्यक्ष**- श्री युद्धेन्द्र वर्मा।